

॥ श्री ॥

हिन्दी-काव्यालङ्कार

जिसमें समस्त अलङ्कारों के लक्षण और उदाहरण अव्यन्त सुगम

रीति से वर्णित हैं तथा न्याय और निज निर्मित

अलङ्कार दर्पण भी सम्मिलित है ।

—रचयिता—

साहित्याचार्य बाबू जगन्नाथप्रसाद भानु-रवि,
मिठावरट ई. प. सी. बिलासपुर, मध्यप्रदेश ।

—*—

जगन्नाथ प्रेस बिलासपुर में मुद्रित ।

वर्ष १९१८ ई०



PRINTED BY S ABDULLA MANAGER AT THE
‘ JAGANNATH PRESS ’—BILASPUR, C P.

AND

PUBLISHED BY MR B JAGANNATH PRASAD
PROPRIETOR



भूमिका ।

[illegible]

गमाधर तथा भाषा-ग्रंथ अलंकार प्रकाश, अलंकार मञ्जूषा, गमचन्द्रभूषण, जसवन्तभूषण और भाषाभूषण से बहुत कुछ सहायता ली गई है अतः हम इनके लेखकों के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रदर्शित करते हैं । संस्कृत के तो प्रायः सभी ग्रंथ उत्तम हैं पर भाषा में अलंकार प्रकाश और अलंकार मञ्जूषा ऊँचे दर्जे के ग्रन्थ हैं । अग्न्युद्गम पुस्तक में पाठकों को कुछ भी लाभ हुआ तो मैं अपने को कृतकृत्य समझूँगा ।

विलासपुर, मध्यप्रदेश }
१९१८

जगन्नाथ प्रसाद,
भानु-कवि ।

हिन्दी-काव्यालङ्कार का सूचीपत्र ।

[illegible]

काकतालाय	१०७	तिलतट्ट	२०९
काकुवक्राक्ति	१०	तुल्ययोगिता	३४
कारकदीपक	३७	दण्डक	१००
कारणमाला	६५	दण्डपूषिका	१०१
कालभेद दोष	१०३	दिनदिनपति	१०८
काव्यौलम	७१	दापक	३६
काव्याभाषा	७१	दृष्टान	४०
कूपमङ्गक	१०७	दृष्टिपुटक	१४
कृष्माण	१०७	देहलीदापक	१००
कैतवापनुति	२६	दोष अर्धालकार	८०१
कैमुक्ति	१०७	दोष शब्दालकार	१००
कोमला	५	निदशना	४३
कौडिन्य	१०७	निरक्ति	९०
क्रम	६७	निरोध	१३
गङ्गुरिका प्रसाद	१०८	निपथाभाम	७४
गणपति	१०८	शुभित	१०९
गतागत	१६	याम	१०७
गुडोक्ति	८७	न्यूनता-दोष	१०१
गुडोत्तर	८४	पञ्चथ	११०
गौडी	७	परिकर	४७
घटप्रदीप	१०८	परिकराङ्कुर	४८
घुणाक्षर	१०८	परिणाम	२४
चन्द्र चन्द्रिका	१०८	परिवृत्ति	६८
चपलातिशयोक्ति	३३	परिसरया	६८
चित्रालकार	१०	परुषा	५
चित्रोत्तर	८५	पाचाला	५
छेकानुप्रास	३	पथ्याय	६७
छेभापनुति	२७	पथ्यायोक्ति	५२
छेकोक्ति	८९	पथ्यस्ताप-नुति	२७
जन्तरग	१०८	पिष्टपपण	८१०
जलसुविका	१०९	पिहित	८६
तद्गुण	८०	मुनश्चवदाभाम	२
तिरस्कार	७०	पुरुषभेद-दोष	१०३

सूचीपत्र ।

[illegible]

वापसी	९	सम . .	६०
वृत्तिविरोध	१००	समप्राधान्य	९८
वृत्त्यनुप्रास	४	समाधि	७०
रुद्रकुमारी वाक्य	१११	समामाक्ति	४७
वैदमा	५	मनुष्य	६९
वैपर्य	१०८	माथानिग्रयोक्ति	३०
व्यतिरेक	४५	मभय	०६
व्याघात	६५	मभावता	७४
व्याजनिंदा	५३	महाक्ति	४६
व्याजस्तुति	५३	मापराध, परिणामाक्ति	८१
व्याजोक्ति	८६	मामा, य	८३
शब्दप्रमाण	०५	मार	६६
शब्दालंकार	०	मिदावलोकन	१६
शुक्लापहनुति	०३	सुदोषपुद्गल	१११
श्रुत्यनुप्रास	६	मूलीकगण	१११
शृङ्खला	३९	मृगम	८६
श्रव अथ	८८	रथालापुल्ल	११०
रूप-शब्द	११	रमरण	१५
समृद्धि	०७	राभावोक्ति	०८
मकर	९८	हतु	९३
सङ्कट	२५	हेत्वपहनुति	०३
सदृश उभयार्थकार	९०	हृदनक न्याय	११०
मदल न्याय	१०५	क्षारबीर न्याय	११०





हिन्दी-काव्यालङ्कार

(Figure of Speech)

१. काव्य जिसमें अलङ्कृत होता है उसे काव्यालङ्कार कहते हैं, काव्य दो प्रकार का है (१) गद्य (उदाहरित वाक्य) (२) पद्य (छन्द निबद्ध) जिसमें गद्य वा पद्य दोनों हों उसको चम्पू कहते हैं, यथा—

छन्द निबद्ध सुपद्य कहि, गद्य होत विन छन्द ।

चम्पू गद्यऽरूपद्य मय, भानु भनत सानन्द ॥

२. काव्य के दो भेद और हैं (१) दृश्य, जो देखने योग्य हो यथा नाटकादि (२) श्रव्य जो सुनने या पढ़ने के योग्य हो अर्थात् त्रिपि सद्य यथा रामायणादि ।

३. काव्यान्तर्गत चमत्कार को अलङ्कार कहते हैं । अलङ्कार का धर्म है—काव्य की शोभा बढ़ाना ।

४. अलङ्कार तीन प्रकार के होते हैं —

१ शब्दालङ्कार, जहाँ शब्द रचना के द्वारा चमत्कार भासित हो । यथा, रघुनन्द भानन्द केन्द सौजन्य चन्द दशरथ नन्दनम् ।

२ अर्थालङ्कार, जहाँ अर्थ के चमत्कार पाया जावे । यथा, भक्ति में मायत रैन मे, धामा मेरे दार ।

३ उभयालङ्कार, जहाँ एक से अधिक चमत्कार हो पावें फिर वे शब्द के हो या अर्थ के या दोनों के, यथा—

लसत मंजु मुनि मंडली, मध्य सीय रघुनंद ।
ज्ञान सभा जनु तनु धरे, भक्ति सच्चिदानंद ॥

सू०—अलंकार का विषय कहीं० सूक्ष्म और वादग्रस्त है अतएव विद्यार्थियों को चाहिये कि यथा संभव परस्पर वादानुवाद द्वारा इसका अभ्यास सिद्ध करें ।

शब्दालङ्कार

(A figure of Speech in words)

शब्दालंकार के आठ भेद हैं, १ पुनरुक्तवदाभास, २ अनुभास, ३ यमक, ४ वक्रोक्ति, ५ भाषासमक, ६ श्लेष, ७ प्रहेलिका और ८ चित्र ।

१ पुनरुक्तवदाभास (पुन उक्तवत् आभास)

पुनरुक्ती वद भास, शब्द भिन्न एकार्थ जहं ।

अर्थ जुदो परकास, भंग अभंगहिं रूपतें ॥ यथा—

सह सारथि सूत सुलसत, तुरंग आदि पद सैन ।

निकट तुम्हारे रहत नृप, सुमनस विबुध सुबैन ॥

यहां प्रथमार्द्ध में सारथि और सूत ये दोनों भिन्न होने पर भी एकार्यवाची हैं परंतु पद भग करने से अर्थ जुदा हो जाता है जैसे हे नृप सहसा (वलपूर्वक) रथि (योद्धागण) सूत (सारथी) तुरंग (घोड़ा) और पैदल फौज आदि से आप शोभायमान है । द्वितीयार्द्ध में अभंग पद सुमनस और विबुध भी एकार्यवाची हैं पर अर्थ जुदा है अर्थात् मंत्री और पंडित ।

२ अनुप्रास

(Alliteration)

(वर्ण साम्य मनुमासो, वैषम्येऽपि स्वरस्य यत्)

व्यंजन सम चरु स्वर असम, अनुप्रास लंकार ।

छेक, वृत्ति, श्रुति, लाट अरु, अंत्य पांच विस्तार ॥

जहां व्यंजन की समानता हो, स्वर मिलें या न मिलें यही अनुप्रास है । अनुप्रास में स्वरों की गणना नहीं की जाती ।

१ छेक-अनुप्रास

(Single Alliteration)

जहँ अनेक व्यंजनन की, आश्रुति एकै चार ।

सो छेकानुप्रास ज्यों, अमल कमल कर धार ॥

छेक का अर्थ चतुर है—उसको व्यंजन सहस्य सवृत् मास्य मनेकधा । जहाँ अनेक व्यंजनों की केवल एक बार क्रमपूर्वक आश्रुति हो उसको छेकानुप्रास कहते हैं । यहाँ पर धार में 'र' की और अमल कमल में 'मल' की एकही बार क्रमपूर्वक आश्रुति है यदि एक स्थान में 'मल' हो और दूसरे स्थान में 'सम' हो तो क्रमपूर्वक नहीं समझना चाहिये जैसे 'रस' की आश्रुति 'रस' न कि 'गर' । यथा—

(१) गधा के घर पैर गुनि, सीनी पाँकन गुभाग ।

दागदुखी मिमरी सुगे, गुधा रही महुनाम ॥

यहाँ पर और वैन में 'प' की, सीनी और पाँकन में 'च' की, गुधा और महुनाम में 'ग' की एक एक बार आश्रुति

है वैसेही दाख दुखी में 'द' और 'ख' की और मिसरी और मुरी में 'म' और 'र' की एक एक बार ही आवृत्ति है ।

(२) शुभ शोभा सोहै सही, वारी वर चल चाल ।

यहां शकार, भकार, सकार, हकार, वकार, रकार, चकार और ल कार का एक एक बार ही सादृश्य है ।

(३) बाधे द्वार काकरी चतुर चित काकरी सो उमिर वृथा करी न राम की कथा करी ।

यहां वृथा और कथा में 'य' की, चतुर और चित में 'च' और 'त' की, करी करी में दोनों वर्णों की और काकरी-काकरी में तीनों वर्णों की आवृत्ति एक एक बार ही है ।

(४) भंजेड चाप दाप बड़ बाढ़ा (प और व)

(५) छेम करी कइ छेम त्रिसेखी (छेम, छेम, क, क)

(६) अति गह गहे बाजने नाजे (ग, ह, व, ज)

२ वृत्ति-अनुप्रास

(Harmonious Alliteration)

व्यजन इक वा अधिक की, आवृत्ति कैयो बार ।

सो वृत्त्यानुप्रास जो, परै वृत्ति अनुसार ॥

वृत्तिगत अनेक व्यंजनों का अथवा एक व्यंजन का कई बार सादृश्य हो उसको वृत्त्यानुप्रास कहते हैं. इसमें क्रमाक्रम के विचार की आवश्यकता नहीं, यथा—

(१) कहि जय जय जय रघुकुल केतू ।

(२) सत्य सनेह सील सुख सागर ॥

वृत्ति के तीन भेद हैं (१) उपनागरिका (२) कोमला (३) परुषा ।

१ उपनागरिका—जिसमें मधुर वर्ण तथा सानुनामिक की वाहुल्यता हो, परन्तु ट ठ ड द ण नहीं यथा—रघुनन्द
आनन्द कद कौशलचन्द्र शरथ नन्दनम् । गुण-माधुर्यम् ।
अनुकूलरस शृंगार, हास्य, करुणा और शांत ।

२ कोमला—जिसमें प्रायः उपनागरिका के ही वर्ण हों, परन्तु योजना सरल हो, सानुनामिक और संयुक्त वर्ण कम हों और अल्प समास वाले वा समास रहित ऐसे शब्द हों जो पढ़ते या सुनते ही समझ में आजावें यथा—सत्य सनेह मील मुखसागर । गुण प्रमाद ।
अनुकूलरस-सुख रस ।

३ परुषा—जिसमें कठोर वर्ण ट ठ ड द ण, द्वित्व वर्ण, रेफ, दीर्घ समास तथा संयुक्त वर्णों का बाहुल्य हो जैसे—
रक रक करि पुच्छ करि कष्ट कष्ट कपि गुच्छ ।
गुण—क्रोध । अनुकूलरस—वीर, वीर्यरस, भय, शत्रुघ्न और रौद्र ।

उपनागरिका और कोमला की गीति को वैदर्भी, और परुषा की गीति को गौड़ी कहते हैं, वैदर्भी और गौड़ी के मिश्रण को पांचाली गीति कहते हैं यदि पांचाली में गुड़ना शुद्ध कम गुड़ना हो तब सादी गीति कहानी है, यथा—

वैदर्भी सुंदर सरल, गौड़ी मुंठित गुड़ ।

पांचाली जानो जग रचिना गुड़ अगुड़ ॥

नाम

उदाहरण

- १ सर्वान्त्य—न ललचहु, सब तजहु, हरि भजहु यम करहु ।
- २ समान्त्य— जिहि सुमिगत सिधि होय, गखनायक करिवर वदन ।
विषमान्त्य— करहु अनुग्रह सोय, बुद्धि राशि शुभगुण सदन ।
- ३ समान्त्य—सय तो । शरणा । गिरिजा । रमणा ।
- ४ विषमान्त्य—लोभिहिं प्रिय जिमि दाम, कामिहि नारि पियारि जिमि
तुलसी के मन राम, ऐसे हो कव छागिहौ ।
- ५ समविषमान्त्य—जगो गुपाला । सुभोर काला । कहै यशोदा ।
लहै प्रमोदा ।
- ६ भिन्नतुक्रान्त—कुंजों कुजों पति दिन जिन्हें, चाव से था चराया
जो प्यासी थीं परम ब्रज के, लाड़िले को सदाही ।
खिन्ना दीना विरल वन में, आज जो घूमती है ।
ऊधो कैसे हृदयधन को, हाय ! वे धेनु भूलीं ।

३ यमक ।

('Repetition of words in different meaning')

यमक शब्द को पुनः श्रवण, अर्थ जुड़ो होजाय ।

शीतल चंदन चंदनहिं, अधिक अग्नि तें ताय ॥

यहाँ चंदन शब्द दो बार आया है, एक अर्थ चंदन दूसरे शब्द का सवय 'नहि' के साथ निषेधाचक हैं, यमक में ड और ल, व और व, तथा र और ल का भेद नहीं माना जाता है ।

(यमनादां भवेदैक्यं, डलोर्वगोर्लोरोस्तथा) यथा—

भजन कह्यो तातें भज्यो, भज्यो न एरहुं बार ।

दूर भजन जातें कह्यो, सो तू भज्यो गवार ॥

सू०—जहां आदर, आश्चर्य, शोक तथा हृदयार्थ नहीं शब्द कहि
 पार आवे सो यमक नहीं । यथा—राम राम कहि राम कहि
 राम राम कहि राम, ऐसे प्रयोग को वीप्सा कहते हैं
 (वीप्साया द्विकृति) इसमें विशेष चमत्कार प्रतीत नहीं
 होता, अनुमास भलेही मान लिया जाय ।

४ वक्रोक्ति ।

(Ambiguous utterance)

(वक्रोक्ती द्विभांति की, एक श्रेय सुनि काहु)

वाक्य शब्द के सुनतही, अर्थ अनेक लगवाहिं ।
 वही श्रेय वक्रोक्ति है, भंग अभंग लगवाहिं ॥

१ भग पद वक्रोक्ति

शब्द भंग करि अर्थ जहे, अन्य कह्यु होजाय ।
 श्रेय भंग पद ताहि को, कहन सुरुवि समुदाय ॥

१ गौन्य शालिनी प्यारी हमारी, मदा तुमही इक इष्ट भरी ।

(१) गौन्य शालिनी (२) गौः + अरदा + शालिनी ।

ही नगद नहि ही भवशा शालिनी हुं नहीं भम नाटि परी ।

२ भरी तन्योना ही गतो, श्रुति मेवह इह भंग ।

नाक गान घेमाँ छटो, रामि मृगजन के मेग ॥

तन्योना—दान का भूषण, तन्यो नारी—गम नहीं, श्रुति गान,

चेह । नाक नाक, न्यम । मृगजन—मोती, दूध दूध ।

(इसको अभंग पद भी कहाँ है)

२ अभंग पद वक्रोक्ति

शब्द भंग कीन्हें विना, अर्थ विविध विधि होय ।
तहं वक्रोक्ति श्लेष को, पद अभंग है सोय ॥

कोतुम ! हरिप्यारी ! कहा, वानर को पुरकाम ।
श्याम सलोनी ! श्याम रूपि, क्यों न टरैं तव वाम ॥
हरि (कृष्ण और बंदर) श्याम (कृष्ण और काला)

कारु वक्रोक्ति

जहँ कंठ ध्वनि भिन्न से, आशय जुटो लखाय ।
सो वक्रोक्ती काकु है, कविवर कहैं बुझाय ॥

अलिकुल कोकिल कलित यह, ललित वसत विहार ।
कहु मखि ! नहिं अइहैं कहा ? प्यारे अवहुं अगार ॥
क्यों नही आवेंगे ? ध्वनि अवश्य आवेंगे ।

५ भाषा समक

(Mixed Language)

शब्दन की विधि एक जहँ, भाषा विविध प्रकार ।
वाक्य मनोहर होयँ तहँ, भाषा समक विचार ॥

दण्डु तत्र विचित्रता सुमनसा, मै था गया बाग में ।
काचित्तत्र कुरंगशाव नयना गुञ्ज तोडती थी खडी ।
उन्नद्ध धनुषा कटाक्ष विशिखै, घायल किया था मुझे ।
तत्मीदामि सदैव मोह जलधौ हैदर गुजारै शूर ॥१॥
जादिनते जमुनातट बाहि वजावत बामुरि नैक निहारो ।
होशमरफत न मुदबदस्त भरोम रहै दिनगैनि तिहारो ।

हाफिज़ फिक्र कुदामनुमायम कोउ उपाय चलै न हमारो ।
हे सखि कोउ उपाय रचा फिर बारिक देखिय नददुलारो ॥२॥

हर नयन हृताश ज्वालाया जो जलाया,
रति नयन जलौं घे खाक बाकी बचाया ।
तदपि दहति चित्त माक नया मैं करोगी,
मदन सगमि भूयः क्या बला आग लागी ॥३॥

यदा भृग्नरी कर्कटे वा रुमाने, यदा चक्ष्मखोग जर्मीराममाने ।
तदा ज्योतिषी नया लिखंगा पढ़ेगा, हुआ बालका रादशाही करेगा ॥

भृग्नरी=दृढम्पति, कर्कटे (कर्म में) रुमाने (धनु में)
चक्ष्मखोग (शुक्र) जर्मीराममाने (दशमस्थान में)

६ श्लेष

(Paronomie)

श्लेष शब्द पलट्टे बिना, औरहु अर्थ सुधार ।

डोह करण काकोटर हु, रक्षा करण उदार

काकोटर (कामेनाग) की भी रक्षा करनेवाले उदार श्रीकृष्ण ।

काकोटर (जयत) की भी रक्षा करने वाले उदार राम ॥

१ कोटर गहर गहर, जामन बनना आयना ।

मेरु वनम बननाग, पीपल रानी गुन नग ॥

२ दास गप कपि ने जयहि, रम्य जनकगुहा ।

राघवगण गपन फिरहि, दास गप रमाहु ॥

दास-जामन-विध्वंस किया दास को

दास-भारत-दास दास बग

७ प्रहेलिका

(Riddle)

प्रश्नहिं में उत्तर कढ़ै, कछु शब्द के फेर ।
सो प्रहेलिका दोय विधि, शब्द अर्थ गत हेर ॥

(शब्दगत)

देखी एक अनोखी नारी, गुण उसमें इक सबसे भारी ।
पढ़ी नहीं यह अचरज आव, मग्ना जीना तुरत बतावे ॥ (नांड़ी)
हिंदी भाषा में इ के स्थान में र भी हो जाता है । यथा—
अनाड़ी, अनारी ।

(अर्थगत)

लक्ष्मीपति के कर वसै पांच वरण के माहिं ।
पहिलो अक्षर छांड़ि के सो देते क्यों नाहिं ॥ (सुदरशन)

८ चित्र

(Pictorial)

चित्र वर्ण विन्यास हे, पदमादिक आकार ।
गोरख धंधा समनिरस, त्यागत सुकवि विचारा ॥

(१) कमलवद्ध

नैन वान इन वैन मन, ध्यान लीन मन कीन ।
चैन हैन दिन रैन तन, छिन छिन उन बिन छीन ॥

यहा ध्यान देने से विव्रित होगा कि इस दोहे का मल्येक
दूसरा वर्ण नकार है । एक नकार को मध्य में रखकर, उसके
चारों ओर गोलाकार अन्य वर्ण क्रमपूर्वक रखने से कमलाकार
चित्र बन जाता है ।

(२) निरोष्ठ

(Non-labial)

छांड़ि पवर्गाहि के वरण, और वरण सब लेत ।
जगैं न अधरा धर पढ़त, सो निरोष्ठ चित चेत॥

येन हीन नाम मात्र मिलित मे अन्धकार होत अन्ति होत हीन क विषय है ।
साधन का यो इ ता यका य होत लक्षण का दत्त मुदा साका रुता दूतो दुध दन है ।
येमादाय माहर य गहरो को कोर बने अग रग रात रग अग अति मेत है ।
दगि दंत दार का हरनता हरित नैता दकतो नशो दन्त दा दित हरि अग है ॥

(३) अमत्त

(The Non symbolic)

विनं मात्रा वरणनि रचें, ई ऊ ए कलु नाहिं ।
ताहि अमत्त वखानिये, समुझो निज मन माहिं॥

जग जगमगत भगत जन रस यस भव भय हर फर करन अचर नर
कनक यसन तन अमन अनल बड़ पट दल वसन सजल थर थर कर
अजर अथर अज वरद चगन धर परम धर्म गन धरन मरन पर
अमल कपल रर वदन सनन जस हरन मदन मद मदन कदन हर

(४) अतर्लापिका

(The Hidden mode)

उत्तर आवे अंत में, प्रश्न तां ही होय ।
सोई अंतर्लापिका, हेतु अर्थ सहें जोय ॥

- १ भूषित श्री हरि प्रेम, पौढ भरे निद दान करी ।
- २ पाने होत भनन, श्री मंगल दिग मानसरी ॥
- ३ मां (लक्ष्मी) ४ ज्ञान ५ मायम ६ मायम
- ७ यह मंगली । पितृ नाम देव प्रदित का करिने ।
- ८ लाल श्री वा लाल श्री दिग अन्ति करिने ॥

कौन चरित सुख देय कहा तैं सरजू आई ।

छद बद्ध को कियो राम जस भापा गई ॥

उत्तर-शंभु, प्रसाद, सुमति, हिय हुलसी ।

राम चरित, मानस, कवि तुलसी ॥

(५) वहिर्लापिका

(The Hidden outside)

बाहर से उत्तर कढ़ै, वहिर्लापिका सोय ।

१ भापे काह सज्जन को कौन शंभु चाहन है का को सुख होत
काकी माला शिवधरो है ।

काह गज वधन छवी ले हँ काकेअति कौन हर पुत्र सीप
सुत को बिखारो है ॥

शोभा को से नाम का है कृष्ण नख धारो कहा सिंधु से
मिलत कौन काह अनियारो है ।

उत्तर के वर्णन में आदि अंत छोड़ दीजे मध्य लीजे सोरिये
मनोरथ हमारो है ॥

उत्तर-यार कृपा करि नेरु निहारिय ।

२ कलौ नाम विपरीत करि, जामे भयो प्रसिद्ध ।

सो अनादि सम है गयो, जानि लेहु करि सिद्ध ॥

उत्तर-उलटा नाम जपत जग जाना । बालमीक में ब्रह्म समाना ॥

(६) दृष्टिकूटक

(The Puzzler)

दृष्टि को छुने वाला कूट क्लिष्टता का बोधक है तथापि
अन्तर्लापिका और वहिर्लापिका के समान यह चित्रालङ्कार का
एक भेद माना जा सकता है । यथा—

१ मयाने, २ वरु, ३ सुकृत, ४ कपाल, ५ साकर, ६ हरिणी,

७ मनेश, ८ मुक्ता, ९ पानिय, १० पहाड़, ११ मग्निता, १२ नयन ।

अहि घड़ी गिणु की सुता, ताके पति को द्वार ।

ता अरि पति की भाषिनी, सदा बसें तुव द्वार ॥

अहि घड़ी नागबेल, नागबेल का गिणु हिम (हिमांचल),

हिमांचल की कन्या पार्वतीजी, पार्वती पति शिवजी, शिवजी का

दाग सर्प, सर्प के शत्रु गरुड़जी, गरुड़जी के पति विष्णु भगवान्

उनकी भाषिनी जो लक्ष्मीजी हैं सो सर्व आप के द्वार पर

निवास करें ।

मेघ राशिते पांच लीं, गने कदें जो नाम ।

ता भवण द्वादश गये, आये नहिं घनश्याम ॥

मेघ राशि से पांचवां सिंह, सिंह का भक्षण मास अर्थात्

महीना, सो घाह महीने हो गये घनश्याम नहीं आये, समर्थ

महान्मा मूरदासजी ही ऐसी कविता में बहुत कृत कार्य हुए हैं ।

(७) लोमविलोम

(The two fixed in different sense)

सीधे उलटे चांचिये, औरे औरे अर्थ ।

एक छंद में सुकविजन, प्रगटहिं दोउ नमर्थ ॥

लोम अनुलोम=यथा क्रम, विलोम=उलटा क्रम, यथा—

मनन माधर ज्यों सरके सप रेणु गुदेम गुणेगुमर् ।

नैन यशोतपिनी नरुनी रुचि चीर गरे निमि काल फर्म ।

नैन गुनी जग भीर भरी धरि भीर परा ननु कान बरे ।

नैन मनी गुरु बाल जल गुभ मो बन में सरसो बण मे ॥१॥

गन पनी रम में न रमो भगुनि पल पारु गुनी मन मे ।

ह बन को गुनरी परधीर परा भर भी गजनी मुन मे ।

नै पल कादिनि रम रफी रिदनीर ननी पित की बन मे ।

पस गुने गुगुदेमु ररे रम के रम उदो बपमान मे ॥२॥

(८) गतागत

(The two faced conveying the same sense)

सूधो उलटो वांचिये, एकहिं अर्थ प्रमान ।
कहत गतागत ताहि कवि, केशवदास सुजाना ।

यथा—माल बनी बल केशवदास सदा बश केल बनी बलमा ।

(९) सिंहावलोकन

(Backward glance)

सिंहावलोकन का अर्थ सिंह समान आगे चलते हुए पीछे देखते जाना है, अर्थात् मुक्त पद को फिर ग्रहण करना । यथा—

नामहिं के सुमिरे सुख पायहौ छाडि यहै न गिनौ जग कामहिं
कामहिं कोउ न आयहै ये सुत मातु मातु पिता प्रिय बंधु औ वामहिं
वामहिं हो सिंगरे भव के सुख होत नतौ छनहु बिसरामहिं
रामहिं राम ररौ रे ररौ सब वेद पुरान को है परिनामहिं



अर्थालङ्कार ।

(A figure of speech in sense)

व्यंगम रस तें भिन्न जो, हृदय रूप सरसाहिं ।
चमत्कार भूषण सरिस, सोई भूषण आहिं ॥
यदपि सुजाति सुलच्छनी, सुखरूप सरस सुवित्त ।
भूषण विन न विराजई, कविता वनिता मित्त ॥

यह बात नहीं कि बिना अलङ्कार के कविता हो ही नहीं सकती अभिप्राय यह है कि कविता कैसीही उत्तम अच्छे वर्ण आर रसयुक्त क्यों न हो परन्तु अलङ्कार हीन होने के कारण नम्र कहाती है अतएव अलङ्कार का ज्ञान परमावश्यक है काव्य में जो चमत्कार है उस चमत्कार को ही अलङ्कार कहते हैं जैसे कोई कहे कि “ यह पुरुष बड़ा विद्वान है ” तो इस वाक्य में कोई चमत्कार नहीं, यदि यही वाक्य इस प्रकार कहा जाय कि “ यह पुरुष दूसरा वृहस्पति है ” तो इस वाक्य में चमत्कार आगया । अलङ्कार काव्य के हृदय सम्म है । यथा—

छंद चरण भूषण हृदय, करमुख भावज्जुभाव ।
चन्द्र धाई श्रुति संचरी, माहित अंग सुभाव ॥

अलङ्कार तीन अर्थो-अलङ्कार में भेद यह है कि अलङ्कार में उनी अर्थ के दूसरे अर्थ पलटने से अलङ्कारिता पला जाती है । अलङ्कार में उनी अर्थ के दूसरे अर्थ रखने से अलङ्कारिता नहीं जाती ।

अलङ्कार में प्रयुक्त वाक्य दो प्रकार के होते हैं—
१. उदात्त, २. उपदात्त, ३. सामान्य और ४. भेद ।

जैसे-

जाकी तुलना कीजिये, सो उपमेय वखान (स्त्री का मुख)
 जासों तुलना कीजिये, सो जानो उपमान (चन्द्रमा)
 तुलना बोधक शब्द जो, वाचक कहिये ताहि (सदृश)
 गुण उपमे उपमान को, गहन धर्म स्वइ आहि (उज्ज्वल)

उपमेय वह है जिसकी तुलना किसी दूसरे वस्तु से की जावे, जैसे मुख, पद, अंग आदि । उपमेय को वर्ण्य, वर्णनीय, विषय, प्रस्तुत, वा प्रकृत भी कहते हैं ।

उपमान वह है जिससे तुलना की जावे अर्थात् जिसकी उपमा दीजावे, जैसे चन्द्र, कमल आदि । उपमान को अवर्ण्य, अवर्णनीय, विषयी, अप्रस्तुत वा अप्रकृत भी कहते हैं ।

वाचक वह शब्द है जिससे तुलना का बोध हो जैसे, से, सो, सरिस, समान, इव इत्यादि । कविजनों के मत में जहां-इव, यथा, ज्यों, जैसे, सी, से, सो, लौं इत्यादि उपमावाचक शब्द कहे गये हों उसको श्रौती वा शाब्दी उपमा कहते हैं और जहां-तुल्य, तूल, सम, समान, सरिस, सदृश, वत् इत्यादि उपमा-वाचक शब्द कहे गये हों उसको आर्यी उपमा कहते हैं ।

धर्म वह है जिसमें उपमेय और उपमान का साधारण धर्म प्रगट हो, जैसे उज्ज्वलता, मृदुता, कठोरता इत्यादि ।

१ पूर्णोपमा

(Complete Simile)

पूर्णोपम वाचक धरम, उपमे अरु उपमान ।

ससि सो उज्ज्वल तिय वदन, पल्लव से मृदु पान॥

पूर्ण+उपमा=पूर्णा उपमा, उप=समीप, मा=जापना, समीपता से विशेष ज्ञान । जिसमें भेद रहते हुए भी समान धर्म कहा जाय सो उपमा है । पूर्णोपमा में उपमेय, उपमान, वाचक और धर्म चारों रहते हैं । ससि सो उज्ज्वल तिय वदन को गद्य में इस प्रकार कह सकते हैं स्त्री का मुख कैसा उज्ज्वल है जैसा चन्द्र वैसेही पल्लव से मृदु पान को इस प्रकार कह सकते हैं इस कैसे कोमल है जैसे पल्लव । यथा—

करि कर सरिस सुभग भुज दंदा ।

जहां उपमेय, उपमान, वाचक और धर्म इनमें से एक दो वा तीन का लोप हो उसे लुप्तोपमा जानो, यथा—

(१) लुप्तोपमा

(Elliptical Simile)

लुप्तोपम है अंग जहँ, न्यून चारतें देख ।

विजुरीसी पंकज मुखी, कनकलता तिय लेख ॥

यहां विजुरीसी पंकज मुखी धर्म लुप्तोपमा और कनकलता तिय लेख, वाचक धर्म लुप्तोपमा हैं, उपमा के और भी भेद हैं ।

(२) मालोपमा

(Garland of Similes)

मालोपम उपमेय की, उपमा बहुत प्रकार ।

श्रुति से मात्र मन से, चाला नैर धार ॥

माल पंक्ति को कहते हैं । यथा—

कंदी मल नम भेम गंगेपा । महल वदन मन पर दोषा ॥
पुनि मनरी पूषमान गगना । पर धर सुनि महम रग काना ॥
पदुरि नख मय बिनवा मेही । मंदर मुगलीह दिन मेही ॥

सुरानीरु=देवताओं की फौज जिससे राज्यमद सूचित होता है । सुरा=मद, शराब । यथा—

बाज ज्यों विहंग पर सिंह ज्यों मतंग पर त्यों विपच्छ वंस पर
शेर सिवराज है ।

(३) रशनोपमा (Girdle of Similes)

रशनोपम उपमेय जहँ, होत जात उपमान ।
कुलसी मति मति सेजु मन, मनहीं सो गुरुदान॥

रशना=कर्धनी वा शृंखला । यथा—

काव्यवर जग सोहै कैसो सोहै काव्यवर जैसो मानसर
सोहै सरन को अधिराज । कैसो सोहै मानसर कहौ कवि भानु
मोसों जैसो सोहै द्विजराज कैसो सोहै द्विजराज । मदन मुकुर
जैसो मदन मुकुर कैसो प्यारी के बदन पर जैसी रही छविछाज ।
प्यारी को बदन कैसो सुख को सदन जैसो सुख को सदन कैसो
जैसो शुभ रामराज ।

२ अनन्वय

(Comparison Absolute)

जाकी उपमा ताहि सों, दिये अनन्वय मान ।
तेरे मुख की जोड को, तेरो ही मुख जान ।

अन+अन्वय=नहीं हे सम्बन्ध जिसका, यथा—१ उन सम ये
उपमा उर आनी, २ तू सो तुही दगस्त्य दुलारे, ३ सुन्दर नंद
किशोर से सुन्दर नंद किशोर ।

३ उपमानोपमेय

(Reciprocal comparison)

सो उपमानुपमेय, उपमा लागे परस्पर ।

तुव दृग खंजनसेय, खंजन हे तुव नैन से॥ यथा—

१ वे तुम मम तुम उन मम स्वामी ।

२ राम कथा मुनिरय उखानी, मुनी भट्टेण परम सुख मानी ।

३ ऋषि पूढी हरि भगति मुदाई, कही जमु अधिकारी पाई ।

४ आँखपुरी अमरावतिसी अमरावति आँखपुरीसी बिगने ।

इसको उपमेयोपमा भी कहते हैं ।

४ प्रतीप

(Converse)

(१) सो प्रतीप उपमेय नम, जत्र कहिये उपमान ।

लोचन मे अँवुज घने, मुख सो चंद्र चखान ॥

प्रतीप=प्रतिदूत, उलटा । यहा उपमानही उपमेय सा-
गित है । यथा—

इति नराय जगुत जल, जो जगित मम न्याम ।

(२) उपमे को उपमान तें, जादर जय न होय ।

गर्भ कान मुख को कहा, चंद्रहि नीके जोय ॥

उर्गें उपमेय को अनादर है ।

का धूपत मुख मेरुत अदना नाहि ।

पद मरम पर मोहउ हरि अनुरागि ॥

- (३) जहाँ वरणात् उपमेय तें, हीनो करि उपमान ।
तीछिन नैन कटाक्ष तें, मंद काम के वान ॥

यहां उपमान का अनादर है ।

- १ सिय मुख समता पाव किमि, चंद्र वापुरो रंक ।
- २ कुलिशहु चाहि कठोरता, कोमल कुसुमहु चाहि ।
चित खगेस रघुनाथ कर, ब्रूम परै कहु चाहि ॥
- ३ देखो नंद नंद सुखकंद ब्रजचंद आजु राधे मुखचन्द चंद
मंद करि डारो है ॥

- (४) उपमे की उपमान जब, समता लायक नाहिं ।
अति उत्तम दृग मीन से, कहे कौन विधि जाहिं ॥
यहां उपमान की योग्यता माननीय नहीं । यथा—
सीय बदन सम हिम कर नाहीं ।

- (५) व्यर्थ होय उपमान जब, उपमे को लखि सार ।
दृग आगे मृग कलु न ये, पंच प्रतीप प्रकार ॥
यहां उपमान बिल्कुल अयोग्य ठहरा गया । यथा—
कोटि काम उपमा लघु सोऊ ।

५ रूपक

(Metaphor)

रूपक साम्प्र निषेध विन, जहाँ उपमे उपमान ।
मिलि तद्रूप अभेद है, अधिक न्यून सम जान ॥

रूपक=किसी के सदृश रूप का धारण करनेवाला चाहे स्वरूप से वा गुण से, मनोहर आकृति और स्वभाव जैसे—
हस्तकमल, मुखकमल, नेत्रकमल, मुखचन्द्र इत्यादि ।

तद्वृत्त अधिक

- १ मुख शशि वा शशिते अधिक, उदित ज्योति दिन रात ।
- २ विष वारुणी वधु मिय जेही, कहिय रमा सम किमि वेदेही ॥

तद्वृत्त न्यून

- १ सागर ते उपजी न यह, कमला अपर मुहात ।
- २ राम मात्र लघु नाम दमाग ।
- ३ दूद भुन के हरि रघुवर मुंदर बेस, एक जीभ के लछिमन मुंदर सेस ।

तद्वृत्त सम

- १ नैन कमल ये ऐन ई, और कमल किटि काम ।
- २ लखन उतर जाहुति मरिस, मृगुपति फोप कुरानु ।

अभेद अधिक

- १ गमन करन नीकी अगत, कनकलता यह शाम ।
- २ गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन ।
- ३ इन्द्रिग पया विराजत बेनी, सुनन सकल सुद मंगल देनी ।

अभेद न्यून

- १ हे गंधे तू उर बसी, परे मानुषी देह ।
 - २ अति खल जे बिपरी बरु कागा ।
 - ३ सब के देखत ज्योय पथ, गयो मिथु के पाग ।
- पविरान विन पक्ष को, बीर ममीर पुमार ॥

अभेद सम

राम तथा मुंदर कनारी, मलय विहग उदासनहारी ।

गू-जहां उपरंग को उतमान मानकर फिर उसकी तुलना उतमान में करे गो तद्वृत्तक है और जहां उतमंग हो को उतमान मानकर फिर उसकी तुलना उतमान में न करे गो अभेद कवय है ।

६ परिणाम

(Commutation)

उपमे की किरिया करै, उपमा सो परिणाम ।
लोचन कंज विशाल तें, देखत देख्यो वाम ॥

परिणाम=स्वभाव का बदलना । यथा—

- १ कर कमलन धनु सायक फेरत ।
- २ मामवलोक्य पंकज लोचन ।
- ३ है धनश्याम पै तेरो पपीहग है ब्रजचंद पै तेरो चक्रोर है

७ उल्लेख

(Representation)

(१) सो उल्लेख जु एक को, बहु समझें बहु रीति ।
जाचक सुरतरु, तिय मदन, अरि को काल प्रतीति ।

उद्+लेख=उत्कृष्टलेख, जहां एक को अनेक जन अनेक प्रकार से समझें ।

देखहिं भूप महा रणधीरा । मनहुं वीर रस बरे सरीरा ॥
रहे असुर छल जो नृप भेखा । तिन प्रभु प्रगट काल सम देखा ॥

(२) बहु विधि बहु गुण एक के, बरगो द्वितीय उल्लेख ।
तू रण अर्जुन, तेज रवि, सुर गुरु वचन विशेष ॥

जहां एक को एक जन अनेक प्रकार से वर्णन करे सो दूमरा भेद है, जैसे तू रण में अर्जुन, तेज में सूर्य और वचनों में वृहस्पति है । यथा—

सब गुण भरा ठकुरवा मोर, अपने पहरु अपने चोर ।

८ स्मरण

(Rhetorical Recollection)

सुमिरन लखि सुनि काहु को, सुधि आवे जहँ खास ।

सुधि आवत वा वदन की, देखे सुधा निवास ॥

स्मरण सुनने देखने सोचने तथा स्वप्न सेभी हो सकता है।

१ प्राची दिशि शशि उग्यो मुहावा ।

सिय मुख सरिस देखि मुन पाया ॥

२ सधन कुन छाया सुरद, शीतल मंद समीर ।

मन है ज्ञात अजौ वहे, वा जमुना के तीर ॥

९ भ्रांति

(Mistake)

भ्रांति और को औरही, निश्चय जब अनुमान ।

तुव सँग फिरत चकोर हे, वदन सुधानिधि जाना ॥ यथा-

१ कपि करि हृदय विचार, टीन मुद्रिका दारि नव ।

जानि अशोक शैगार, सीय दपि उठि कर गहवा ॥

२ पाँव महासर देन पां, नायन बँधी भाग ।

फिर फिर जान महासगी, पड़ी मोड़न जाय ॥

गू०-इन्नाद (पागलपने से वा निच ठिकाने न रहने) से भ्रांति होती है उसमें चमत्कार नहीं ।

१० संदेह

(Doubt)

शलंकार संदेह में, कि धौं धौं के शान ।

यदन किधौं यह शीतकर, ठीक परन नहीं जान ॥

१ रास रासन रासि होई कि नाहीं ।

२ कि तुम तौन देव यहें कोऊ ।

११ शुद्धापहनुति

(Concealment pure)

शुद्धापहनुति झूठ लहि, सांची वात दुराहिं ।
नैन नहीं ये मीन जुग, छवि सागर के माहिं ॥

शुद्ध=स्वच्छ, अपहनुति=छिपाना ।

१ यह मुख नहीं चद्रमा है ।

२ बंधु न होय मोर यह काला ।

अपहनुति के भेद नीचे लिखे हैं ।

कैतवापहनुति

(Concealment of the deceitful)

कैतव पहनुति एक को, मिस करि वरणात आन ।
तीछन नैन कटाक्ष मिस, बरसत मन्मथ बान ॥

कैतव=छल, व्याज, मिस । इस अलङ्कार का वाचक
“ मिस ” है ।

१ लम्बी नरेस वात सब माची । तिय मिस मीच सीस पर नाची ॥

२ पठे मोह मिस खगपति तोही । रघुपति दीन बडाई मोही ॥

हेत्वपहनुति

(Concealment with a reason)

वस्तु दुरइये युक्ति सों, हेतु अपहनुति सोय ।
तीव्र चंद्र नहिं निशि रवी, बड़वानलही जोय ॥

चंद्र को देखकर कहती है, तीव्र है अतएव चंद्र नहीं,
रात्रि है अतएव सूर्य नहीं—यह तो बड़वानल ही है । यथा—

प्रभु प्रताप बड़वानल भारी । शोषेउ प्रथम पयोनिधि वारी ॥

तव रिपु नारि रुदन जलधाग । भरेउ बहोरि भयउ तिहि सारा ॥

पर्यस्तापहनुति

(Concealment transferred)

पर्यस्तापहनुति धरम, श्रान वस्तु में रोष ।

हे न सुधाधर की जु यह, वदन सुधावर ओष॥

पर्यस्त=फेंका हुआ । यथा—

१ मृदु न होहि भूप गुण चारी ।

२ हे न सुधा यह है सुधा-संगति साधु मुजान ।

३ काकूट विष नाहि, विष है केवल इंद्रि ।

हर जागत छफि चाहि, डीह सँग हरि नौद न तजत ॥

श्रांतिपहनुति

(Concealment under a misdeed)

श्रांति अपहनुति सत कहे, पृच्छक को भ्रम जाय ।

ताप कंप ज्वर है सखी !, ना मखि सदन सताय॥

कद प्रभु रोंभि जनि हृदय दगाह । लूटन अशानि न के तुन गहा॥

ये फिरीट दशकंधर केने । आवत बाल मनय के प्रेने ।

सू०—इसको श्रांतापहनुति भी कहने दें ।

लेशापहनुति

(Concealment of the smallest part)

लेश अपहनुति सुक्रे करि, पर सो यात दुगय ।

कमल अधर छत पिय नही, मय्यी सीत शत्रु पाय॥यथा

पशु न पीनिका भोज मुवाह । बान्द मनाम दुग्गपेदि नाह ॥

सू०—सुक्रे (सूकर माना) इसी के अर्थों में है ।

१ भय निजा बट भायो भोज । मुदगा बान्द करि बोज ॥

निमगही मन भयो बान्द । नरो मालि मज्जन । ना मनिपेद ॥

फलोत्प्रेक्षा-सिद्धास्पदा

कैकड़ कटु बोलत मनौ, लौन जरे पर देय ।

यहां पर जले पर निमक छिड़कने की वेदना कटु बोल का फल नहीं तथापि तद्वत् फल की-कल्पना की गई, कटु बोल सिद्ध ही है ।

फलोत्प्रेक्षा-असिद्धपदा

तुव पद समता को कमल, इक पादहिं जल सेय ।

कमल स्वतः जल में रहता है चरणों की समतारूपी फल की प्राप्ति के लिये नहीं तथापि फल कल्पित किया गया । जड़ कमल में जल सेवन करना असिद्ध है अतएव अमिद्धासपदा इसी को चेतन धर्मोत्प्रेक्षा (Personification) भी कहते हैं मनु जनु नहीं कहा अतएव गम्योत्प्रेक्षा भी है ।

सू०-उत्प्रेक्षा में “यथा” वा “ज्यों” शब्द का कथन दोष है इसमें “मनु जनु” का प्रयोग समुचित है यदि पद में क्रिया किसी हेतु से कही गई हो तो हेतूत्प्रेक्षा और उस से किसी फल की इच्छा प्रगट हो तो फलोत्प्रेक्षा जानो । उत्प्रेक्षा की समर्थन को अर्थान्तरन्यास का कथन अनुचितार्थ दोष है जैसे-इच्छत हिमगिरि तमहिं मनु गुफा लौन राखि भीत, शरणागत छोटेहु पर करत बड़े जन प्रीत । यहां अचेतन तम को सूर्य से भय होनाही संभव नहीं फिर हिमालय द्वारा यह केवल व्यर्थ संभावना है इस के समर्थन के लिये उत्तरार्द्ध में अर्थान्तरन्यास का कथन व्यर्थ है ।

१३ अतिशयोक्ति

(Hyperbole)

अतिशयोक्ति भूपण तहां, जहँ केवल उपमान ।
कनकलता पर चंद्रमा, धरे धनुष द्वै दान ॥

जहां केवल उपमानही कथन होता है वहां अतिशयोक्ति जानो जैसे यहां कनकलता से मुद्रा श्री, चंद्रमा से मुख, धनुष से भैंस और बाणों से नयनों का बोध होता है। इसी का रूपकातिशयोक्ति भी कहते हैं, यथा—

- १ अरुण पराग जनज धरि नीके, ससिहि भूप अटि सोध अयोके ।
यहां फर नहीं कहा जलज कहा, मुख नहीं कहा शशि कहा ।
- २ आज किधर चांद निकळा.

सापक्षनातिशयोक्ति

(II-Concealed)

नापक्षनवपक्षनुति नहिनि, रूपशयोक्ति बग्वान ।
अहि शशि मंडल पे लसै, जिय पतान जिनजान ॥

यहां मुख रूप चंद्रमा के ऊपर वेणो रूप भट्टि (मरु) का जो वर्णन है सोई अतिशयोक्ति है और अहिदा निशान पापार्थ में पाताल में है उसे कहा कि पाताल में मत जानो यह व्यक्तनर है, यथा—

- १ सुषुप्तु तितनन में सुधा, भूनि कइत विह मरि ।
- २ गोर भेद भइत मरि गुर भूनि पर पंडित पापम राजपद दो पदन है ।

१ कह, कपि प्रथम दक्षिणा लेहू । पाछे हमहिं मंत्र तुम देहू ॥

२ पद पखारि जलपान करि, आप सहित परिवार ।
पितर पार करि प्रभुहिं पुनि, मुदित गयो लै पार ॥

१४ तुल्ययोगिता

(Equal Pairing)

(१) तुल्य धर्म वर्यै वरणा, वा अवर्त्य इक संग ।
वैनैन वांके भये, प्रगटत यौवन अंग ॥

जहा अनेक उपमेयों का वा अनेक उपमानों का क्रिया वा गुण करके एकही धर्म संबंध कथन किया जाय वहां तुल्य योगिता जानो यहा वैनैन (वर्य) का एक ही धर्म वांके होना कहा गया, यथा--

वर्य वर्य

१ वैनैन वांके भये, प्रगटत यौवन अंग ।
२ गुरु रघुपति सब मुनि मन माहीं । मुदित भये पुनि पुनि पुलकाहीं ।
३ श्रीदशरथ सों मागिवे हेतु गुनी निगुनी द्वज द्वार पै डोलै ।
४ चरण धरतु चिंता करत, तनिक न भावै सोर ।
सुवरण को, दूँढत, फिगत, कवि काभी, अस चोर ॥

अवर्य अवर्य

१ लखि कोमलता अंग तुन, हे कामिनि विन खोर ।
को न गुलावरु मालती, कदली गुनत कठोर ॥
२ कमल कोरु मधु करे खग नाना । हृषे सकल निमा अवमाना ॥
३ अरुणोदय सकुचे कुमुद, उडगन ज्योति मलीन ॥

इस आधे दोहे के उदाहरण में हेतु अलंकार का भी आभास है, अतएव उभयालंकार है यदि पूरा दोहा रहे (तिमि तुम्हार आगमन सुनि भये नृपति बल हीन) तो वर्य अवर्य के संबंध से दीपकालंकार होगा.

(२) शत्रु मित्र पै एक सम, जहां होत व्यवहार ।

१ गुण निधि नौके देत तू, तिय को अरि को हार ॥ यथा—

२ कोऊ काटौ क्रोध करि, वा सींचा करि नेह ।

बैरत पेह बंधू के, तऊ दुहून की देह ॥

३ बर्दा संत समान चित, हित अनहित नहिं कोय ।

अजुलि गत शुभ सुमन जिमि, सम सुगंध कर दाय ॥

४ जे निमिदिन सेवा कर, अरु जे कर विरोध ।

तिन्हें परम पद देत हरि, कही कौन यह बोध ॥

५ कीरति भणित भूति भल सोई ।

गुरसरि सम सत्र कर दिन होई ॥

(३) गुणगण घट्ट के तुल्य करि, एकहि ठौर बखान ।

१ लोकपाल सुरपति वरुण, गम फुरै नृप जान ॥ यथा—

२ मधु मगध सर्वज्ञ शिर, मरुत कला गुण पाग ।

जाग ज्ञान वैराग्य निधि, प्रगत कल्प तह नाम ॥

३ तुम पितु मातु बंधु भिय मोरे ।

उदाहृत्य न ३ यदि विधिपूर्वक कथन किया जाय तो
श्रेय होगा ।

मूल-सर्वज्ञ और सर्वप्र नृप धर्म के योग से अणुमाना
नहीं, वही अवस्था करीं तुम धर्म के योग से होने प
है तुम-सर्वज्ञता है यही योग का अर्थ योग जेना
है नही मयोग जेना ही है अविनाश पर है वि
विधि विपत्ति करने की इच्छा की इच्छा अर्थ है

१५ दीपक

(Illuminator)

दीपक वर्ण्य अवर्ण्य को, एके धर्म समान ।

गृह गढ़ गिरि अरुगुणिन को, होय उच्चतामान ॥

दीपक में प्रस्तुत (वर्ण्य) और अप्रस्तुत (अवर्ण्य) अर्थात् उभयपक्ष का धर्म एक बारही कथन किया जाता है सो यह अलंकार वहीं होगा जहां दीपन का कथन चमत्कारी हो यहां गृह, गढ़, गिरि अवर्ण्य, गुणिन वर्ण्य, उच्चता धर्म, ५

१ सोहत है मद सों कलभ अति प्रताप सों भूप ।

भूप (वर्ण्य) हांथी (अवर्ण्य) सोहत (धर्म)

२ सोहत भूपति दान सों, फल फूलन आराम ।

भूपति (वर्ण्य) आराम=बाग (अवर्ण्य) सोहत (धर्म)

३ संग तें जती कुमत्र तें राजा । मान तें ज्ञान पान तें लाजा
प्रीति प्रणय बिनु मद तें गुनी । नाशहि बेगि नीति अस सुनी ।

राजा (वर्ण्य) अन्य (अवर्ण्य) नाशहि (धर्म)

४ राम नाम मणि दीप घर, जीह देहरी द्वार ।

तुलसी भीतर बाहिगुं, जो चाहासि उजियार ॥

जीभ (वर्ण्य) देहरी (अवर्ण्य) उजियार (धर्म)

५ अगुन मगुन बिच नाम मुमाखी ॥ उभय प्रबोधक चतुर दुभाखा
सगुण (वर्ण्य) अगुण (अवर्ण्य) प्रबोध हांन (धर्म)

नीचे दो उदाहरण ऐसे देते हैं जिनमें जिसे प्रस्तुत सो वर्ण्य और जो अप्रस्तुत सो अवर्ण्य है, यथा—

- ६ हृग अंजन, मुख पान तें, मिहँदी तें कर जान ।
जावरु नें तिय चरण की, शोभा अधिक बगवान ॥
- ७ लोभी जन धन लाभ अरु, तिय जन मंग सकाम ।
साधु सकल श्रीराम के, नाम लहत आराम ॥

मृ०-तुल्य योगिता में केवल वर्ण्य का वर्ण्य के साथ वा
अवर्ण्य का अवर्ण्य के साथ सम्बन्ध है दीपक में उभय
पक्ष का अर्थात् वर्ण्य के साथ अवर्ण्य का सम्बन्ध है
तुल्य योगिता में विवक्षा की अपेक्षा है दीपक
में धर्म मर्याद मिद्ध है । कोईर कवि देहरी दीपक को
अलग अलंकार मानते हैं अर्थात् ऐसा पद रखना जो
दोनों ओर लागू हो परंतु प्राचीनों ने इसे दीपक
अलंकार के ही अन्तर्गत माना है देहरी दीपक को इसी
ग्रंथ के न्याय मञ्जरण में देखो ।

१६. कारक दीपक

(The cause Illustator)

कारक दीपक एक सें. क्रम नें भाव अनेक ।
जानि चितय आशनि हँसनि, पूजनि धान विरेक ॥

शून्यता पदपूर्वक विपरीतों में कर्ता कर दागों कथा
रूपा जाय, गया--

१. भेद पदार्थन भिन्नता गाढ़े ।

२. पदार्थ नूतन प्रकृति धारण । नवन मेह प्रकृति धारण गाढ़ा ॥

१७ आवृत्ति दीपक

(Illuminator repeated)

आवृत्ति दीपक तीन विधि, आवृत्ति पद की होय ।

घन बरसों है री सखी, निसि बरसों है सोय ॥

आवृत्ति=कई बार, घन बरसने पर ही है, गात्रि बरस सी हो रही है, यथा—

हे विधि मिले कवन विधि बाला ।

अर्थावृत्ति

दूजी आवृत्ति अर्थ की, शब्द पृथक् इक सार ।

कूजहिं कोकिल चाव सों, गूँजहि भृंग अपार ॥

कूजहि गूँजहि शब्द पृथक् तात्पर्य एक ।

पदार्थावृत्ति

पद अरु अर्थ दुहने की, आवृत्ति तीजी आहि ।

मत्त भये है मोर अरु, चातक मत्त सराहि ॥

मत्त मत्त पदार्थावृत्ति, मत्त भये और मत्त सराहि—अर्थावृत्ति

१ भले भलाई पै लहहि, लहहि निचाई नीच ।

सुग सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीच ॥

लहहि लहहि सराहिय सराहिय—पदार्थावृत्ति

२ तोन्यो नृपण को गरव, तोन्यो हर को दड ।

राम जानकी जीय को, तोन्यो दुःख अखंड ॥

तोन्यो तोन्यो तोन्यो—पदार्थावृत्ति

१८ एकावलि

(The Necklact)

एकावलि पद रीति जहँ, ग्रहित मुक्त पद जान ।
दृग श्रुति लों श्रुति बाहुलों, बाहु जंघ लों मान ॥

अवलि=पक्ति, ग्रहित=ग्रहण किया हुआ, मुक्त=त्यागा हुआ
इसमें पूर्व-पूर्व के प्रति उत्तरोत्तर वस्तु का विशेषण भाव से स्थापन
या निषेध होता है, यथा—

१. विन गुरु होय कि मान, जान कि दोग विंगिन विन ।
इमे "शृंगला" भी कहते हैं ।

२. सो जम् कदिये काट, जहा चाग पंकज नहीं ।
पंकज है सो काट, जहा भयन नहीं नीन है ॥
भयन में रह मार, मरु मरु गुजर न जो ।
गुजर ह विन सार, जा न दग्न मन जनन के ॥

१९ प्रति वस्तूपमा

(The Comparison)

प्रतिवस्तूपम धर्ममम, जुदे जुदे पद जान ।
मोहन मानु प्रताप सों, लगन मूर धनु मान ॥

प्रति+वस्तु+उपमा । उपमान और उपमेय इन दोनों के
सादृश्य में एक ही मापदण्ड परी पृथक् पृथक् शब्द द्वारा कथन
हो, 'मोहन मानु प्रताप सों' यह उपमान वाक्य है और 'लगन
मूर धनु मान' यह उपमेय वाक्य है इसमें वस्तु-वाक्य एक
दूसरे में स्तरेय रहता है ।

१७ आवृत्ति दीपक

(Illuminator repeated)

आवृत्ति दीपक तीन विधि, आवृत्ति पद की होय ।
घन वरसों है री सखी, निसि वरसों है सोय ॥

आवृत्ति=ऊई बार, घन वरसने पर ही है, रात्रि बरस सी
हो रही है, यथा—

डे विधि मिलै कवन विधि वाला ।

अर्थावृत्ति

दूजी आवृत्ति अर्थ की, शब्द पृथक् इक सार ।
कूजहिं कोकिल चाव सों, गूजहिं भृंग अपार ॥
कूजहि गूजहिं शब्द पृथक् तात्पर्य एक ।

पदार्थावृत्ति

पद अरु अर्थ दुहन की, आवृत्ति तीजी आहि ।
मत्त भये है मोर अरु, चातरु मत्त सराहि ॥

मत्त मत्त पदावृत्ति, मत्त भये और मत्त सराहि—अर्थावृत्ति

१ भले भलाई पै लहहिं, लहहिं निचाई नीच ।
सुमा सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीच ॥

लहहिं लहहिं सराहिय सराहिय—पदार्थावृत्ति

२ तोन्यो नृपगण को गग्व, तोन्यो हर को दड ।
राम जानकी जीय को, तोन्यो दुःख अखंड ॥

तोन्यो तोन्यो तोन्यो—पदार्थावृत्ति

१८ एकावलि

(The Necklace)

एकावलि पद रीति जहँ, ग्रहित मुक्त पद जान ।
दृग श्रुति लो श्रुति बाहुलों, बाहु जंघ लों मान ॥

अवलि=पक्ति, ग्रहित=ग्रहण किया हुआ, मुक्त=त्यागा हुआ
इसमें पूर्व-पूर्व के प्रति उत्तरोत्तर वस्तु का विशेषण भाव से स्थापन
या निषेध होता है, यथा—

१ विन मुक्त होय कि ज्ञान, ज्ञान कि होय विगत विन ।

इसमें “शृंगला” भी कहते हैं ।

२ तो जल रुदिये काह, जहा चार पंकज नहीं ।

‘पंकज है सो काह, जहा भ्रमर नहीं लीन है ॥

भ्रमर में वह मार, मधुर मधुर गुंजन न जो ।

गुंजन हूँ विन सार, जा न हूँ मन मनन के ॥

१९ प्रति वस्तुपमा

(The poet Comparison)

प्रतिवस्तुपम धर्ममम, जुदे जुदे पद जान ।

सोहत भानु प्रताप सों, जमन सूर भनु दान ॥

प्रति+वस्तु+उपमा । उपमान और उपमेय इन दोनों के
मात्रों में समीक्षा मापानन्द धर्म पृथक् पृथक् जगत् द्वारा कथन
है, ‘सोहत भानु प्रताप सों’ यह उपमान वाक्य है और ‘जमन
सूर भनु दान’ यह उपमेय वाक्य है इसमें परस्पर पात्रपक्ष एक
दूसरे से मिल रहे हैं ।

कुवलयानन्द के मत से कहीं२ वैधर्म्य से भी दृढीकरणार्थ
धर्म की साम्यता बताई जाती है । उदाहरण नीचे देखिये—

१ राजत राम अतुल बल जैसे (उपमान वाक्य)

तेज निधान लखन पुनि तैसे (उपमेय वाक्य)

२ पिशुन बचन सज्जन चितै, सकै फोरि ना फारि ।

कहा करै लगि तोय में, तुपरु तीर तरवारि ॥

‘सकै फोरि ना फार’ और ‘कहा करै’ इन भिन्न पदों का
अशक्तता रूप एक समान ही धर्म कथन किया गया ।

३ बुध जनहीं जानै भले, बुध जन श्रम गंभीर ।

बध्या क्यों करि, अनुभवै, तन प्रमून की पीर ॥

४ गुणी जनन के गुणनि को, आपुहि होत बिकास ।

कस्तूरी आपोद नहि, शपथ किये रुखु भास ॥

कहीं२ कानु से भी एक समान धर्म कहा जाता है, यथा—

५ सोमै वरणि सकौ विधि फेही । डाबर कमठ कि मंदिर लेही ॥

६ सां अनु राजकुंवर कर देही । बाल मराल कि मडर लेही ॥

सू०—रसगंगा सर के कर्त्ता पडितराज जगन्नाथ के मत में
प्रतिरूपता और दृष्टांत में थोड़ीही विलक्षणता के कारण अंतर
है नहीं तो ये दोनों एकही अलङ्कार के भेद मात्र हैं ।—

२० दृष्टांत

(Exemplification)

दृष्टांतहु प्रतिविंब सम, दुहुं वाक्य सम दीख ।

कृष्ण प्रेम पगि जोग कस, राज्य पाय कस भीख ॥

दृष्टांत=देखा गया है अंत अर्थात् निश्चय जहा, उदाहरण ।
दृष्टांत में एक से धर्म वालों की साम्यता बताई जाती है इसमें

उपमान उपमेय और साधारण धर्म का बिंय प्रतिबिम्ब भाव रहता है काव्य प्रकाश में दृष्टांत का लक्षण यों है । दृष्टांतः पुनरेतेषां सर्वेषां प्रतिबिम्बनम् । साहित्य दर्पण में इसका लक्षण यों लिया है दृष्टांतस्तु समर्थस्य वस्तुनः प्रतिबिम्बनम् । इसमें दो वाक्य रहते हैं जिस वाक्य का निश्चय कराना हो सो दार्ष्टान्त है और जिस वाक्य द्वारा निश्चय कराया जाय सो दृष्टांत है सामान्य का समर्थन सामान्य में और विशेष का विशेष से होता है, यथा—

१ उह सनेह लघुन पर करहीं । भूमि भून गिरि वृण शिर धर्यों

२ पगीं मेम नंदलाल के, डैम न भारत जांग ।

मधुप राज पद पाय के, भरि न मांगत लोग ॥

३ सँ सहायक गबल के, कोउ न निबल गहाय ।

पवन जगावन आग को, दीपदि देन पृथाय ॥

४ पृथुनि मिले मन मिलत है, अनमिलने न मिलाय ।

दूध दही तें जमत है, काजी तें फट जाय ॥

५ कर्मन शम्भान के जड़मति होत गुमान ।

रसगी भारत जान नै, मित्र पर पतन निशान ॥

६ निरगिरि रूप नंदलाल को, रंगन रूप नहि भान ।

ननि विगूण कोऊ कर्मन, रुटु भौषधि को पात ॥

७ यमै बुराई जागु नन, गाही को सममान ।

भलो० कहि छोड़िगे, खोटे घर जय दान ॥

८ जगत जनायो गिरि मकरन, मो रहि जग्यो नाहि ।

ज्यों क्षांतिन सब देखियन, आँखि न देखी नाहि ॥

९ इभय पीष गिरि मोहन देगी । प्रसन्न भौव दिख लागे तेगी ॥

- १० मन मलीन तन सुंदर कैसे । विपरस भरा कनक घट जैसे ॥
- ११ अनरस हू रस पाइये, रसिक रसीली पास ।
जैसे साँटे की कठिन, गाँठों भरी मिठास ॥
- १२ मधुर वचन तें जात मिट, उत्तम जन अभिमान ।
तनक शीत जल सों मिटै, जैसे दूध उफान ॥
- १३ रिसकी रसकी रसिक को, तेरी सबै सुहात ।
तातें सीरे नीर तें, जैसे आग सिरात ॥
- १४ दोष एक गुण पुंज में, होत निमग्न 'मुरार' ।
जैसे चंद्र मयूख में, अंक कलक निहार ॥

किसीर प्राचीन आचार्य ने उदाहरण नामक एक अलङ्कार अलग माना है परन्तु अन्य प्राचीन तथा अर्वाचीन आचार्यों ने उसे दृष्टांतगत ही माना है । लाला भगवानदीनजी ने अपने ग्रंथ अलंकार मंजूपा में इसकी उत्तम और युक्ति सगत विवेचना की है अर्थात् दृष्टांत में ज्यों, जैसे, वाचक नहीं होते, जिनमें ये वाचक हों सो उदाहरण है दृष्टांत में कवि का मुख्य लक्ष्य उपमान वाक्य (उत्तरार्ध भाग) पर होता है और उदाहरणालंकार कवि का मुख्य लक्ष्य उपमेय वाक्य (पूर्वार्ध भाग) पर होता है बात ठीक मालूम होती है और ध्यान देने योग्य है परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि अनेक आचार्यों ने यह भेद इसलिये छोड़ दिया कि जहाँ वाचक स्पष्ट रूप से नहीं आते वहाँ ऊपर से कहने में आते हैं और कोषकारों ने भी दृष्टांत और उदाहरण को एकही ध्यान मानी है । कवि मुरारीदासजी ने दृष्टांत और उदाहरण दोनों अलंकार अलग अलग माने हैं परन्तु वाचक रहते हुए भी उदाहरण नंबर १३ को उन्होंने दृष्टांतालंकार माना है ।

२१ निदर्शना

(Illustration)

(१) निदर्शना आरोपनो, एक अर्थ दुहुं बंध ।

सीटे बचन उदार के, सोने माहिं सुगंध ॥

निदर्शना=रच दिग्गता । जदा दो वाक्यों के अर्थ में समता भावजूचक ऐसा आरोप दिया जाय कि दोनों एक में जान पड़े चाहें वे असंभव न हों सो निदर्शना प्रत्येकार है इनमें एक वाक्य दूसरे के अपेक्षित रहना है इसके वाचक जो, ने, जे, ते, रुई स्पष्ट रूप से रहने हैं और कहां ऊपर से लगाने में आते हैं, यथा—

- १ जड़ चेतन गुण दोष मय, विश्व कीन वस्तुतार ।
संत हंस गुण गती पय, परि हरि वारि विहार ॥
- २ गुन गगन हरि भक्ति विहार । जो मुख चाहे आन उपाई ॥
सो गठ माल मिथु धिन तर्नी । पर पार चाहत जड़ फरनी ॥
- ३ दाता माही मौन्यता, पूर्ण हृद निकलंक ।
- ४ जंग गीत जे नहतु है, तौमो बर वराग ।
जीये गी इन्ग वराग, बाल हृद ते गराय ॥
- ५ कित अरुमा हम अरुप मति, कित रह जंग अमार ।
यसो कर कर विषादिता, लखन उचारन माय ॥

(२) और और के भर्म को, और और आरोप ।

विदुष की यह 'भर्म' जे, अधर मलाई जोषायाय-

- १ नैव जगुल तव भर्म है, है मौलान्युत भोव ।
- २ यम कहि दुहि विरये गिह भोग ।
गिर गुन गति भे नयन पदोग ॥

(३) आप अवस्था तें जहां, औरन को उपदेस ।
धन्यो ताहि नहिं छाड़िये, कहत धरणि धर सेस ।

यथा—

संग लाय करिणी करि लेई । मानहुं मोहि सिखापन देई ॥

(यहां मानहुं शब्द उत्प्रेक्षा वाची नहीं केवल शिक्षा का आरोपक है) इस तृतीय भेद में जहां सत अर्थ कथन किया जाय वह सदर्थ निदर्शना और जहां असत अर्थ कहा जाय वहां असदर्थ निदर्शना जाना, यथा—

(सदर्थ निदर्शना)

- १ धन्यो ताहि नहिं छाड़िये, कहत धरणि धर सेस ।
- २ भानु उदय निज होतही, कमलहिं अर्पित श्रीय ।
सपति को फल अनुग्रह, सुहृदन पर कम नीय ॥
- ३ पद कर हिय मुख चख समताई ।
पाय कमल अहमिति नहि लाई ॥
कीच बीच बसि अस सिखलावै ।
नमि जो चले ऊच पद पावै ॥

(असदर्थ निदर्शना)

- १ राज विरोधी नसत है, यो जग को दरसात ।
चंद्र उदय तें तम निकर, छिन छिन छीजत जात ।
- २ सतापित करि दीन, लहत सतत को संपदा ।
अस्ताचल निमि लीन, भानु तपत दिन में जऊ ॥
- ३ भोग पिछासहि में सदा, जन्म गमायो हाय ।
चितामणि को कांच के, मोलहिं दियो बहाय ॥

४ घट घट में हरि राजड़ी, खोजत अनत वृथाहिं ।
चिंतामणि गर में बैधी, अन्न दूढ़ भू माहिं ॥

सू०-दृष्टांत में दोनों राज्य विंग प्रतिविंग भाव से स्वतंत्र रहते हैं और लोक प्रसिद्ध राज्य से ममता दी जाती है, निदर्शना में एक राज्य दूसरे के आश्रित रहता है ।

२२ व्यतिरेक

(Contrast)

व्यतिरेक जहँ उपमेय में, कोई बात विशेष ।
सुख है अम्बुज सो सखी, मीठी बात विशेष ॥

व्यतिरेक=विशेष भिन्नता, विराग ।

- १ घमघम ते नाम गढ़, घमघम गढ़ानि ।
राम चरित जन कंठि मई, लिय महेन निय जानि ।
- २ नव रिधु रिधल तात यन नोग । गगुन किनर तूमर मफांग
उदित सदा यग्य फरहा ना । पट्टि न मग नभ दिनदिन दूना ॥
- ३ कहत मय पैदी दिये, अर दशों गुण होत ।
निय लिखा पैदी दिये, भगानि नदन उरोत ।
- ४ भत हृदय नरनील मषाना । बदा कदिन पर कहे न नाता ॥
निज पागिताप टाहि नरनीला । परदृष्ट दुरहि सुगत पुनोया ॥
- ५ को बड़ सोट करत भगवत । मुनि मुन भेद मनुषी पाया ॥
- ६ कालि कर एक मुनि मताया । मानन कृप्य होय नहिं दाया ॥
- ७ एक रात एक मुनि धनि, सब रात पर भोव ।
मुनगी रघुवर जाय के, बरन दिगजन गोप ॥

२७ परिकराङ्कुर

(Sprout of Insinuator)

परिकर अङ्कुर नाम, साभिप्राय विशेष्य जहँ ।

नेक न मानत वाम, सूधेहू पिय के कहे ॥

जहा विगेष्य साभिप्राय हो वहां परिपगाङ्कुर जानो जैसे
वाम अर्थात् टेढ़ी ।

१ गुनहू लग्न कर हम पर रोषू । (लग्न न=जो न लखे)*

२ वदन मयंक ताप त्रय मोचन ।

३ सुनहु विनय मम विटप अशोका ।

सत्य नाम करु हरु मम शोका ॥

४ बाल वेलि सूखी सुखद, इह रूखे रुख वाम ।

फेरि डहडही कीजिये, सरस सीचि घनश्याम ॥

२८ श्लेष

(Parono nasia)

श्लेष अलङ्कृत अर्थ बहु, एक वाक्य में होत ।

होयें न पूरन नेह विन, ऐसो प्रगट उदोत ॥

श्लेष=अनेकार्थवाची पद । नेह=तेल, प्रेम । यथा—

१ सागु चरित शुभ सरिस कपाम् ।

निरम विग्रद गुण मय फल जाम् ॥

गुणमय=गुण से भरा हुआ, मूल से भरा हुआ ।

२ सगुण सभूषण शुभ सरस, सुवरण सुपद सुराग ।

इमि कविता अरु कामिनी, लहै जु सो बड भाग ॥

ॐ यहा लग्न न शब्द साभिप्राय मानकर परिकराङ्कुर अलङ्कार है
जहा यह साभिप्राय न माना जाय तो विषम अलङ्कार होगा ।

३ चरण धरत चिंता करत, तनिक न भार्य सोर ।

सुवरण को दृढत फिरत, कवि कापी अरु चोर ॥

उदाहरण नंबर ३ तुल्ययोगिता भी होने से उभयालङ्कार है ।

२९ अप्रस्तुत प्रशंसा

(Indirect Description)

अप्रस्तुत प्रशंस जहँ, प्रस्तुत अर्धहि होय ।

राजहस्य बिन को करै, छीर नीर को टोय ॥

अप्रस्तुत=अनुपस्थित । यदा राजहंस अप्रस्तुत थी प्रशंसा में किसी प्रस्तुत अविवेकी का वर्णन है । इसके पाँच भेद हैं । (यह उदाहरण मारुप्य निबंधना का है) ।

१ मारुप्यनिबंधना (रूप भिन्न रूप का वर्णन)

काँधे केसर चाँधि के, रूप रच्यो मृगराज ।

कूकर क्यों करि है कहौ, करि कुज कंपन गाज ॥

केशर=श्याम यदा समन्वय में अप्रस्तुत सिंह की प्रशंसा में किसी पटित रूप भृंग का वाशूरूप कायर का वर्णन है गया-

१ सुन दशमुख रघोत प्रकाशाकषट् कि ननिनी पतरि विरामा ।

२ भयो मरिचपति सखिलपति, अरु गतन की ग्यानि ।

यदा बढ़ाई ममूद की, तुष न धीम्य पानि ॥

३ गानक गानो पृंद भिन, पिय न रंजक नीर ।

४ फेरोही भूतो रई, मिर पवन नीर दूष ।

५ है रंगा मोपी पुन, कै पूर्यो मरि गान ।

- १ भल न कीन्ह तैं निशिचर नादा। अय मुहिं आन जगायेउ काहा।
अहह बंधु तैं कीन खुटाई। प्रथम न मोहिं जगार्येउ भाई ॥
- २ सीत बात आतप सह्यो, राखि तेरियै आस ।
तऊ पपीहा की जलद, तैं न बुझाई प्यास ॥
- ३ जिन जिन देखे वे कुसुम, गई सुवीत बहार ।
अब अलि रही गुलाब में, अपत कटीली डार ॥

सू०—प्रस्तुताकुर में कहने वाले का मुख्य तात्पर्य उससे होता है जिसके प्रति बात कही जाय । गूढोक्ति में किसी दूसरे सुनने वाले से होता है ।

३१ पर्यायोक्ति

(Periphrasis)

(१) पर्यायोक्ती व्यंग सों, बोलै वचन रसाल ।

चतुर वहै जो तुव गरे, बिन गुन डारी माल ॥

पर्याय+उक्ति=अभीष्ट अर्थ का कथन उसी रूप से न कर दूसरे प्रकार से घुमा फिरा कर करना, यथा—

तिन कहै नाथ कहन किमि चीन्हें । देखिय रवि कि दीप कर लीन्हें ।

(२) मिस करि कारज साधिये, दूजो भेद विशाल ।

तुम दोऊ बैठो यहां, जात अन्हावन ताल ॥ यथा—

१ लखन हृदय लालसा विभेखी । जाय जनरूपुर आइय देखी ॥

२ पूस मास सुनि सखिन सन, साई चलत सवार ।

लैकर बीन प्रवीन तिय, गायो राग मलार ॥

३ सीता हरण तात जनि, कहेउ पिता सन जाय ।

जो मैं राम तो कुल सहित, कहहि दशानन आय ॥

३२ व्याज स्तुति

(Artful Praise or Irony)

(१) व्याज स्तुति निदामिसहि, स्तुति निंदा होय ।

स्वर्ग चढ़ाये पतित लौ, गंग कहा कहूं तोय ॥

व्याज=बढ़ाना, मिस । इस उदाहरण से उमी की निंदा में उमी की स्तुति हुई, यथा—

राम न सकहि नाम गुण गाई ।

उसके सब पिलकर ६ भेद है ।

(२) उसी की स्तुति में उसी की निंदा ।

संसार तू नद भाग है, कहा सरायो जाय ।

पत्ती कर फल आग्र नहिं, निशि दिन सेराई आय ॥

१ अहो मुनीश महा भट मानी ।

२ नाक शान बिन भगनि निहारी ॥ छमा कीन तुम धर्म विचारी ॥

लाजवन तब महज सुभाऊ । निज गुण निज मुख
फटति न काऊ ॥

३ जननी तू जननी भई, बिधि मन कहा नसाय ।

(३) और की निंदा से और की निंदा ।

व्याज निंद निंदा विर्म, निंदा हो भरपूर ।

एर तो ऐसे एर को, नाम धन्यो अण् ॥ यथा—

विपिहु न नारि द्रव्य गति जानी । सकल वषट् भय भगुन मानी ॥

(४) और की स्तुति से और की स्तुति ।

१ जानन तब अकर्म, कहा कीर कीन्ही कहा ।

संग नु स्वाद निग्रह, अपर मधर मे विद को ॥

२ नामु तु वलवर्णिना नाई । निहिं आये दूर जवन धन्या ॥

(५) और की निंदा से और की स्तुति ।

- १ दर से नग्रहि भजहु हरि, कहा लाभ जिय जानि ।
- २ एरु कहत मुहिं सकुच अति, रहा बाल की कांख ॥
तिन महे रावण कवन तै, सत्य कहहु तजि माख ॥
यहा रावण की निंदा से बाल की स्तुति है ।

(६) और की स्तुति से और की निंदा ।

- प्रभु प्रनाथ गुरि उदय लखि, नृप शशि ज्योति मलीन ।

३३ आक्षेप

(Hint)

- (१) तीन भांति आक्षेप है, इक प्रतिषेध विचार ।
चंद्र दरश दे वा अहै, तिय मुख प्रभा पसार ॥

आक्षेप=दूषण लगाना यथा—

- १ प्रभु प्रसन्न हैं दीजिये, स्वर्ग धाम को वास ।
अथवा यातें फल कहा, करहु आपनो दास ॥
- २ सानुज पठइय मोहिं बन, कीजिय सबहिं सनाथ ।
नतरु फेगिये बधु दूड, नाथ चलौ मै साथ ॥

निषेधाभास

(Sounding Hint)

- (२) दूतिय निषेधा भास है, कोउ कवि जन मत लेख ।
हौ नहिं दूती अग्नि तैं, तिय तन ताप विशेष ॥

निषेध+आभास=निषेध सा भासना ।

दूती तो थीही तथापि कहती है कि दूती नहीं हूं वरण
नायिका की प्रबल उत्कठा हू ।

- १ राम करहु सत्र सयम आजू । जो विधि कुशल निवाहें काजू ॥
- २ मोहि तु जानत है कपि है यह मैं कपि हौं नहि काल
हौं तेरो ।

विधि निषेध

(Hint Ambiguous)

(३) दुरे निषेध जु विधि वचन, भेद तीसरो आहि ।
जाहु दई मुहि जन्म दे, चले देस तुम जाहि ॥ यथा-

- १ राज देन कहि दीन धन, मृष्टि न सोच लग लेश ।
तुम विन भरतहि, भूपतिहि, मजहि मनड क्लेश ॥
- २ भरत विनय सादर मुनिय, करिय विनार घटोरि ।
करव साधु मत लोक मत, नृपनर निगम निचोरि ॥
- ३ जदपि कवित रस एका नाहीं । राम मताप भगदयहि माहीं ॥
- ४ कदि न होउं नहि चतुर कटाऊं मति अनुरूप राम गुण गाऊं ॥

३४ विरोधाभास

(Contradiction)

वहे विरोधा भास, भासै जहां विरोध सो ।

वा सुख चंद्र प्रकास, सुधि आये सुधि जात है ॥ यथा-

- १ तंधी नाद कविन रम, गरम गगन रम रंग ।
अन पूरु बृंद निरे, नै बृंद नग अंग ॥
- २ धरि हेतु गगनोद्गु गुगारि । मारे मोहि प्यार की नाई ॥
- ३ गुन नै गुनिय गुनिय नग कर्म ।
- ४ ताग निहारि नय की, कहां मोहि सर कीन ।
जागो नाई । जनक रा, धारि पदक पडो ॥
- ५ ना सुख की मधुगाई कटा कटि, धरि नैन अखिनि गुगारि ॥

- ६ भये अलेख सोच वस लेखा (लेखा=देवता)
 ७ भरद्वाज सुनु जाहि जब, होत विधाता वाम ।
 धूरि मेरु सम जनक यम, ताहि व्याल सम दाम ॥
 = वदौ मुनि पद कंज, रामायण जिन निर्मयो ।
 सखरस कोमल मंजु, टोष रहित दूषण सहित ॥

३५ विभावना

(Peculiar Causation)

- (१) विभावना पट हेतु विन, जहँ वरणात हैं काज ।
 विन जावक दीन्हें चरण, अरुण लखे हैं आज ॥
 विभावना = गई है भावना जिसमें, जावक = महावर,
 अरुण = लाल, यथा—
 विनु पद चलै सुनै विनु काना । कर विनु कर्म करै विधि नाना ॥
 आनन रहित सकल रस भोगी । विन बाणी वक्ता बड़ जोगी ॥
 (२) हेतु अपूरण तैं जवै कारज पूरण होय ।
 कुसुम वाण कर गहि मदन, सब जग जीत्यो ज्योय ॥
 यथा—

- राम कुसुम, यहु मायक नीन्हें । सकल भुवन अपने वश कीन्हें ॥
 (३) प्रति बंधक के होत हू, कारज पूरण मान ।
 निसि दिन श्रुति संगति तरु, नैन राग की खान ॥
 (श्रुति = वेद, कान) यथा—

- रखवारे हति विपिन उजारा । देखन तोहि अछन तेहि मारा ॥
 (४) जवै अकारण वस्तु तैं, कारज परगट होत ।
 कोकिल की बानी अवे, बोलत सुन्यो कपोत ॥ यथा—

- १ भयउ नात निशिचर कुल भूषण ।
- २ परज तें परज उपज, सुन्यो न देख्यो नैन ।
तिष मुख परज में रखे, द्वे इदीवर येन ॥

(५)-काहू कारण तें जवै, कारज होत विरुद्ध ।

करत मोहि संताप यह, सखी शीत कर शुद्ध ॥ यथा-

- (१) उग्न स्वास संम त्रिविर समीग ।
- (२) जेहि तर गहौ कस्त सो पीत ॥

(६) पुनि कछु कारज तें जवै, उपजै कारण रूप ।

नैन मीनतें देखियत, सरिता बहत अनूप ॥ यथा-

- १ जगत पिता में गुत करि जाना ।
- २ शंभु निरचि विष्णु भगवाना । उपजहिं जासु अंशतें नाना ॥
- ३ तुर कर कल्पहिं तें मधू, यद्य पयोधि उत्पन्न ॥

३६ विशेषोक्ति

(Peculiar Allegation)

विशेषोक्ति जहें हेतु सों, कारज उपजै नाहिं ।

नेह घटन नहिं हिय जऊ, काम दीप चिन माहिं ॥

विशेष=विशेष, नेह=प्रेम, हेतु, यथा--

- १ तमकि ताकि तकि गिा धनु परी ।
उठई न पाँटि पानि बल परई ॥
- २ कलांदिह दिवरा घरे, गिंन्यो न द्रवति चोरा ।
- ३ भानु किरो हर ने नऊ, काम म माहिं विहान ।
- ४ दीप घरे ग्यामिं रई, निग्न ततैले नैव ।

३७ असंभव

(Improbability)

कहत असंभव ही जहां, होत असंभव काज ।

को जाने थो गोप सुत, गिरि धारैगो आज ॥ यथा-

१ अति सुकुमार युगल ममवारे । निशिचर सुभट महा बलभारे ॥

२ ऊधो हम नहिं जानतती, मन मोहन कूवरि हाथ विकै है ।

३८ असंगति

(Dis Connection)

(१) होत असंगति हेतु अरु, कारज औरहिं ठौर ।

कोयल मद माती भई, झूमत अम्बा मौर ॥

कोयल तो मद से मत्त हुई उसे झूमना था सो वह तो न
झूमी आम.सै. मौर झूमे, यथा—

१ जिन बीथिन बिहरै सब भाई । थकित होहिं सब लोग लुगाई ॥

२ और करै अपराध कोउ, और पाव फल भोग ।

३ सीता रावण ने हरी, बांधो गयो समुद्र ।

४ बैल न कूदा कूदी गौन ।

(२) और ठौरही होत जहँ, और ठौर को कास ।

तिलक लगायो हाथ में, तुव वैरिन की चाम ॥ यथा-

१ जो जो भावै सोइ सोइ लेहीं । मणि मुख मेलि डारि कपि देहीं ॥

२ ते पितु मातं सखी कहु कैसे । जिन पठये वन वालक ऐसे ॥

(३) औरै काज अरंभिये, औरै करिये दौर ।

मोह मिटायो नहिं प्रभु, मोह लगायो और ॥ यथा-

- १ मोह मिटावन हेतु प्रभु, तुम लीनो अवतार ।
उलटो मोहन रूप धरि, मोहीं सय व्रजनार॥
- २ राजदेन रुहि शुभ दिन साजा । कहेउ जाउ वन केहि अपगाधा

३६ विषम

(Incongruity)

- (१) विषम अलङ्कृत तीन विधि, अन मिलते जु मिलाय।
कहँ कोमल तन तीय को, कहाँ काम की लाय ॥

लाय=अग्नि, यथा—

- १ कहँ कुभज कहँ मिथु अपारा ।
- २ कठिन भूमि कोमल पद गामी ।
- ३ जिहि विधि तुमहि रूप अम दीना । तिहि जड़ पर
घाउर कस कीना ॥
- ४ राम सुकीरति भणित भदेसा । अस मंजम अस मोहि भेदेमा॥
- ५ कहँ गघूर के चरित अपारा । कहँ गति मोहि निरत मगारा॥

- (२) कारण को कलु और रँग, कारण को कलु और ।
जता ज्याम आसिते प्रगट. कीर्ति सेत चहुं टोरा॥

अग्नि ननवार, यथा—

- १ ज्याम सुगभि पय विनाइ अति, गुनद तरहि नै पान ।
- २ या अनुगामी विन दी, गति समुह नहि कोय ॥
- ३ यो ज्यो चो ज्याम रँग, लो लो ज्यम होर ॥

- (३) और भलो उद्यम किये, होन चुरो फल आय।
सखि आये जनमार पे, अभिर गो नन लाय॥परा

- १ भले कहत दुख रौरेहु लागा ।
 - २ मूपक घुस्यो अहार हित, सर्प पिटारी जाय ।
मिल्यो अहार न तिहि कछु, सर्प गयो तिहि खाया ॥
 - ३ गुनहु लखन कर हम पर रोष । कतहुं सुधाइउ तें बड़ दोष ॥
 - ४ करत नीक फल अनइस पावा ।
- प्राचीनों ने विषम के ३ ही भेद माने हैं परन्तु एक चौथा भेद भी प्रतीत होता है :—

(४) और बुरो उद्यम किये, भलो होय तत्काल ।
विष देते विषया दई, ऐसे दीन दयाल ॥

विषया=एक राजकन्या का नाम, यथा—
कालकूट फल दीन अमीके ।

४० सम

(Equal)

- (१) सम भूषण है तीन विधि, यथायोग्य को संग ।
हार कठिन तिय उर बस्यो, जोय कठिन स्वइ अंग ।
इस अलङ्कार को विषम का ठीक विरोधी समझो, यथा—
- १ जस दूलह तम बनी बराता ।
 - २ चिरजीवाँ जोरी जुरै, क्यों न सनेह गँभीर ।
को घटि ये वृषभानुजा, वे हलधर के वीर ॥
- वृषभानुजा=वृषभान की कन्या, वृषभ+अनुजा=बैल की
बहिन अर्थात् गाय, हलधर के वीर=चलदाउ के भाई,
हलधर के वीर=हल धारण करनेवाले बैल के भाई=बैल
- ३ आखर मधुर मनोहर दोउ ।

(२) कारणाही के अंग सब, कारज माहीं चाहि ।

नीच संग अचरज कहा, लछमी जलजा आहियथा

१ जो कुठ काटिय धोर सखि सोई । राम गुनु अम कोहे न होई ॥

२ सीय दुसद दुख सहि लियो, मुना भूमि की होय ।

(३) बिना विघ्नही काज जहँ, उद्यम करते होइ ।

जाहि हूँदने में चल्यो, बीचहि मिलिगो सोइ ॥ यथा-

१ हूँदभि अम्बि ताल दिखराये । विन प्रयाम गुनाथ दहाये ॥

२ छुतहि दृष्ट पिनाफ पुराना ।

३ जपहि नाम जन आगत भारी । मिटहि कुसंरुद्र होहि मुखारी ॥

४ भाव कुभाय अनय आलग हूँ । राम जपन मगल दिमि दमहूँ ॥

सू०-जिन पदों में एक से दूसरे की बराबरी, मिश्रता, ईर्ष्या, होय इत्यादिक भाव प्रदर्शित हों सो समाश्रय का के ही अंतर्गत है परन्तु कोई-इसको लक्षितोपमा तथा लक्ष्योपमा नाम से पृथक् अलंकार मानने हैं, यथा-

उत प्रयाम पदा शन है अनरुं सक पांनि उत इत मोलि लगी है ।

उत दामिनि दत चमक ही उत पाप इन भुन चक गरी है ।

उत चातक तो पिउ पांउ रते रिसर न इत पिउ एक गरी है ।

उत दूर भयद इन अंगुया परमा विरहीन न होइ गरी है ॥

४१ विचित्र

(२ - २)

विचित्र उलटो जनन, उलट फल के फल ।

नमन लगना लगन को, जे है दुख मनन ॥ यथा-

सत होइ विन जगद हनीया । रा दूख जने न होइ ॥

सू०—कोई२ इससे मिलता हुआ अनुकूल नामक अलंकार पृथक् मानते हैं परन्तु वह विचित्रालंकार के ही अंतर्गत प्रतीत होता है, यथा—

प्रतिकूलहि अनुकूल, करव सोइ अनुकूल है ।

दंड उचित बडि भूल, बांधु मोंहि निज भुजनतें ॥ जैसे-

जो बांधेही तोप, तौ बांधौ अपनं गुणनि ।

४२ अधिक

(Exceeding)

अधिक आधार आधेय तें, वा आधेय अधिकाय ।

गोपि हृदय त्रिभुवन पती, कीर्ति न सिंधु समाय ॥

आधार=जिसमें कोई वस्तु ठहरे, आधेय=वह वस्तु जो आधार में ठहरे ।

(आधार बड़ा आधेय छोटा)

१ गोपि हृदय त्रिभुवन पती ।

यहां गोपि हृदय आधार बड़ा ठहरा और त्रिभुवनपति आधेय छोटा ठहरा ।

२ व्यापक ब्रह्म निरजनड, निर्गुण विगत विनोद ।

सो अज प्रेमरु भक्तिरस, कौशल्या की गोद ॥*

यहां कौशल्या की गोद आधार बड़ी ठहरी और ब्रह्म आधेय छोटा ठहरा ।

(आधार छोटा आधेय बड़ा)

१ कीर्ति न सिंधु समाय ।

यहां सिंधु आधार छोटा ठहरा, कीर्ति आधेय बड़ी ठहरी ।

* यह उदाहरण विरोधाभास में भी घटित होता है (उभयालङ्कार) ।

२ बहुत उछाह भवन अति धोरा ।

भवन आधार छोटा, उछाह आधेय बड़ा ।

३ अधिक सनेह समान न गाता ।

गात आधार छोटा, सनेह आधेय बड़ा ।

४३ अल्प

(Smallness)

रम्य जहां हो अल्पता, सो अल्पालंकार ।

अँगुरी की मुँदरी हुती, भुज में करत विहार॥ यथा—

१ रोम रोम प्रति राजर्हा, कोटि कोटि व्रण्ड ।

२ गज मुख तंदुल कण गिरत, घटत न नेरु अहार ।

सो पिपीलिका लै चलत, पालत निज परियार ॥

४४ अन्योन्य

(Reciprocal)

अन्योनहि उपकार, जहां परस्पर पाडये ।

निशिर्हा सो शशि सार, शशि सों निशि नीकी लगै॥ यथा—

१ मृनि रघूरा पारसर नवरी ।

२ मृनिदि मितत अम सोद रूपान् ।

४५ विशेष

(The Extraordinary)

(१) हे विशेष त्रय भाँति हो, अनाधार साधेन ।

नभ ऊपर कंचन लता, कुसुम महा प्राधि देव ॥

पदा कंचन लता पितनी या भागे ही पावे कोर दुग्ध

धर्म जाना यथा—

मोह गिरि नभ निशि पारग भवत ।

(२) थोरेही आरंभ तैं, फल पावै जहँ भूर ।

कल्पवृक्ष देख्यो सही, देखि तुमहिं सुखमूर ॥

आप सुखमूरि को हमने देखा तो साक्षात् कल्पवृक्ष ही देख लिया अर्थात् थोड़े लाभ को अधिक मान लेना, यथा—

१ कपितव दरस सकल दुख बीते । मिले आज मुहिं राम सप्रीते ॥

२ आजुकी या छवि देखि भटू अब देखिवे को न रह्यो कछु बाकी ॥

(३) वस्तु एक को कीजिये, वर्णन ठौर अनेक ।

अंतर बाहर दिसि विदिसि, व्याप रहो प्रभु एक ॥

यथा—

१ निज प्रभु मय देखहिं जगत, कासन करहिं विरोध ।

२ मो में तो में खड्ग खभ में, कहाँ बताऊ दूर ।

३ सीयराम मय सब जग जानी । करौ प्रणाम जोरि जुग पानी ॥

४६ व्याघात

(Frustration)

(१) व्याघात जु कलु और सों, कीजे औरहि कार ।

सुख पावत जासों जगत, तासों मारत मार ॥

व्याघात=विघ्न, धक्का—जिस पदार्थ से जो कार्य होना चाहिये उससे कोई दूसराही कार्य किया जाय जैसे कटाक्षादि से जगत आनदित होता है उसी से मार (कामदेव) जो है सो मारने का कार्य करता है, यथा—

१ देखहु तात वसंत सुहावा । प्रियाहीन मुहिं डर उपजावा ॥

२ उरग श्वास सम त्रिविध समीरा ।

(२) बहुवि विरोधी तैं जवै, काज आपनो सार ।
निहिचै जानत वाल तौ, करत काह परिहार ॥

जहां कारण को उल्टा सिद्ध करके भी उससे कार्य सिद्ध किया जाय, जैसे एक राजा अपने लड़के से कहता है
“तू नादान बच्चा है इसलिये युद्ध में नहीं ले जाते” लड़का कहता है कि अगर आप नादान बच्चा समझते हैं तो युद्ध-न्यायना उचित नहीं, यथा—

- १ ऐसे घचन कठोर सुनि, जो न हृदय बिलगान ।
ना पुनि निषम वियोग दुख, सहिहै पामर मान ।
- २ राखिय अवध जु अवाधि लग, रहत जानिये मान ॥

४७ कारणमाला

(Garland of Causes)

कारणमाला जान, कारण काज परम्परा ।
नीलहिं धन, धनदान, दानहिं तैं फेले सुजस ॥

नीनि मे धन, धन मे दान, दान मे गुण धनता
है, यथा—

- १ धर्म में विगति विगति में शाना । शान मोघनद रंज कराना ॥
- २ विद्या में उपम विनय, विनय जात धम होय ।
नगन धर्म धम पत धिरन, धन में धर्म दर्शय ॥
- ३ विनु मत्तंग न हरि कथा, नेहि विन मोद न भाग ।
मोद गने विनु नम पर, होय न पर अनुभाय ॥

४८ मालादीपक

(The Serial Illuminator)

माला दीपक पूर्व पद, उत्तर प्रति उपकार ।

रस सों काव्यरु काव्य सों, सोभा वचन अपारा ॥

दीपक और एकावलि के मेल से यह अलंकार होता है, यथा—

१ जग की रुचि ब्रजवास, ब्रज की रुचि ब्रज चंद हरि ।

हरि रुचि बंसी “दास”, बंसी रुचि मन बांघियो ॥

२ श्री हनुमान हिये रघुनाथ वसैं रघुनाथहिं में सब लोक है

४९ सार

(The Climax)

सार होत है अधिक जब, इकतें एक बखान ।

मधु सों मधुरी है सुधा, कविता मधुर महान ॥

इस अलंकार में (उत्कर्ष) अधिक से अधिक वा (अपकर्ष) न्यून से न्यून दोनों का समावेश होता है, यथा—

१ अधम तें अधम अग्रम अति नारी । तिन मई मैं मति मंद गँवारी ॥

२ तृणतें लघु है, तूल, तूलहुतें लघु माँगनो (१ मंगन, भिग्वारी)

३ गिरि तें बडो है सिंधु, सिंधुहू तें नभ पुनि, नभहू तें ब्रह्म ब्रह्महूतें बड़ी आशा है ।

५० यथासंख्य

(Relative order)

यथासंख्य वर्णन विषय, वस्तु अनुक्रम संग ।

कर अरि मित्त विपत्ति को, गंजन रंजन भंग ॥ यथा—

१ वंदौ राम नाम रघुनर को । हेतु कृशानु भानु हिम परको॥
-यहां राम शब्द के माहात्म्य वर्णन में ररार अकार
और मकार का क्रमपूर्वक वर्णन है ।

२ अमी हलाहल मद भरे, संत ज्याम रतनार ।
जियत भरत झुकि झुकि परत, जिहि चितवत इक बार॥
जहां क्रम भग हो वह निकृष्ट यथामर्य है, यथा—

३ सचिव वैद्य गुरु तीन जो, प्रिय बालहिं भय आम ।
राज्य धर्म तन तीन को, होय बेगदा नाम ॥
सू०-इसको क्रमालङ्कार भी कहते हैं ।

५१ पर्याय

(The Sequence)

(१) पर्यायहिं क्रमते जवे, बहु इक आश्रय पाय ।
हुती चपलता चरण में, भई मंदता आय ॥

पर्याय=सम अर्थ को बोध करानेवाला शब्द । इसमें
अनेकों का आश्रय एक स्थल में होता है जैसे-त्रिम चरण में
पहिले चपलता भी वहां अब मंदता आ गई, दोनों का आश्रय
एक चरण ही है, यथा—

१ जनरु ताटेउ मुल मोच बिदाई ।
२ दूती देह में लम्फई, पुनि तकराई जोग ।
३ शिरपाई भाई अनहं, भन ते नमस्सिंह ॥

(२) फिर क्रमते जव एकती, वसुधाय आश्रय पाय ।
नीय चद्रन दुति कमल नजि, चंदति ली पनाय ॥
इसमें एवही अनेक स्थलों में आश्रय देता है, यथा—

- १ मणि माणिक्य मुकता छनि जैसी । अहि गिरि गज शिर
साह न तैसी ॥
नृप किरीट तरुणी तन पाई । लहै सकल सोभा अधिकाई ॥
- २ सती विधात्री इन्दिरा, देखीं अमित अनूप ।
जिहि जिहि वेष अजादि सुर, तिहि तिहि तनु अनुरूप ॥
- ३ नाय अनंत अनंत गुण, अमित कथा विस्तार ।
४ कामरिवारे अहीर येई ब्रज बीच विराजत कुंजविहारी ॥

५२ परिवृत्ति

(The Return)

परिवृत्ति न्यूनाधिकौ, कछु देत कछु लेत ।
लहत संपदा शंभु की, बेल पत्र इक देत ॥

परिवृत्ति=विनिमय, कुछ लेना कुछ देना, अदल बदल करना
(थोड़ा देकर बहुत लेना)

लहत संपदा शंभु की, बेलपत्र इक देत ।

(बहुत देकर थोड़ा लेना)

तारा विकल देखि रघुराय । दीन ज्ञान हरि लीनी माया ॥

५३ परिसंख्या

(The Special Mention)

परिसंख्या इक थल वराजि, दूजे थल ठहराय ।
नेह हानि हिय में नहीं, भई दीप में जाय ॥

परिसंख्या=बदले में एक वस्तु को उसी सदृश दूसरे स्थल
में ठहराना, यथा—

- १ दंड यतिन कर भेद जहँ, नर्तक नृत्य समाज ।
दंड अपराधियों को होता है वहां न होकर यतियों के
हाथ में देखा गया भेद भाव अमियों में होता है वहां न
होकर नाचने वाले में देखा गया ।
- २ केशनही में कुटिलता, सचारिन में शक ।
लख्यो राम के राज्य में, डक शशि माहि कलंक ॥
- ३ पत्राही तिथि पाइये, वा घर के चहु पाम ।
नित प्रति पूनो ही रहत, आनन ओष उनाम ॥
- ४ नृपति राम के राज्य में, है न शूल दुख मूल ।
लखियत चित्रन में लिखो, शंकर के कर शूल ॥

५४ विकल्प

(The Alternative)

है विकल्प के तो वहे, के यह कहे विहाल ।
दूर करेगो विरह दुख, के गुपाल के काल ॥

विकल्प=नाना विधि कल्पना । इसमें गंधि विग्रह रूप में

दो तुल्य विरोधी परिणामों का एक साथ ही कथन होता है ।

१ जन्म कोटि लागि रगर हमारी । यों नमुनतु रई कुमारी ॥

२ कीतनु प्राण की केवल माना । विधि करतर कट जाय
न जाना ॥

५५ समुच्चय

(The Combination)

(१) होत समुच्चय भाव घट्ट, उपजे इक भंग जाय ।

तुन अरि भाजत गिरन फिर, भाजन हैं मननाय ॥

समुच्चय-मगर, यथा—

पकित गिनय हेररी परिधानी । हर विनाइ इत्य लखनी ॥

- २ सो नर क्यों दशकंध, वालि वध्यो ज्यहि एक शर ।
 ३ श्याम गौर किमि कहौ बखानी । गिरा अनयन नयन
 विनु बानी ॥
- ४ तजि तीरथ हरि राधिका, तने दुति कर अनुराग ।
 जिहि ब्रज कोलि निरुंज मग, पग पग होत प्रयाग ॥
- ५ मेरी भव बाधा हरौ, राधा नागरि सोय ।
 जातन की भाई परे, श्याम हरित दुनि होय ॥
- काव्यलिङ्ग में जो शब्द वा भाव जिस योग्य हो उसी
 का युक्ति अर्थात् हेतुपूर्वक समर्थन करना है ।
- ६ धर्महीन प्रभु पद विमुख, काल विवश दशशीश ।
 आये गुण तजि रावणहि, सुनहु कौशलाधीश ॥

६० अर्थांतरन्यास

(The Transition)

है अर्थांतरन्यास, जहँ विशेष सामान्य दृढ़ ।
 नृप कर पान पलास, पहुंचत है संग पानके ॥

अर्थ=मतलब, अंतर=दूसरा, न्यास=रखना । इसमें सामान्य
 कथन विशेष कथन द्वारा तथा विशेष कथन सामान्य कथन द्वारा
 उदाहरणवत् पुष्ट होता है अर्थात् एक वाक्य का समर्थन दूसरे
 वाक्य से होता है ।

(सामान्य कथन विशेष कथन द्वारा पुष्ट)

- १ नृप कर पान पलास (सामान्य कथन)
 पहुंचत है संग पान के (विशेष कथन)
- २ वड़े न हूँ गुणन विन, विरद बढ़ाई पाय (सामान्य कथन)
 कनक धतूरे सौ कहैं, गहनो गढ़ो न जाय (विशेष कथन)

३. राम एक तापस तिय तारी (सामान्य कथन)
 नाम कोटि खल कुमति मुधारी (विशेष कथन)
 ४ राम भजन बिनु मिटाहि न कामा (सामान्य कथन)
 थल बिहीन तरु कहुं कि जामा (विशेष कथन)
 (विशेष कथन सामान्य कथन द्वारा पुष्ट)
 १ हरि प्रताप गोकुल बच्चो (विशेष कथन)
 कानहिं करहिं महान (सामान्य कथन)
 २ परशुराम पितु आक्षा राखी (विशेष कथन)
 मारी मातु लोक सब साखी (सामान्य कथन)

नू०—इस अलंकार में वाचक नहीं होता ।

६१ विकस्वर

(The Expansion)

विकस्वर होत विशेष जय, फिर सामान्य विशेष ।
 हरि गिरि धान्यो सत पुरुष, भार सहैं ज्यों शेष ॥

विकस्वर=विस्तृत कथन, यथा—

हरि गिरि धान्यो (विशेष) सत्पुरुष भार सहैं (सामान्य)
 यो शेष (विशेष) यथा—

गिरि पवन गुत पावन नाम् । अपने बस हरि रागंउ राम् ॥

६२ प्रौढोक्ति

(The Bold Speech)

प्रौढोक्ती उत्कर्ष को, करे अहेतुहिं प्रेत ।
 जमुना तीर तमाल से, तेरे प्रान्न खसेत ॥

प्रौढ़=दृढ़, उक्ति=कथन, उत्कर्ष=बढ़ाई-यहां जमुना तीरही के तमाल अधिक श्यामता के कारण नहीं, क्योंकि तमाल कहीं के हों सब एकसे ही काले होते हैं अतएव प्रौढ़ोक्ति, यथा—

काम कलभ कर भुजबल सीवां ।

६३ संभावना

(The Supposition)

संभावना विचार, यो होवै तो होय यों ।

लहतो गुणानि अपार, वक्रा होतो शेष जो ॥ यथा—

१ जो तुम अवत्यों मुनि की नाई । तौ पद रज शिर धरत गुसाई ॥

२ यह विधि उपजै लच्छि जब, सुंदरता सुख मूल ।

तदपि सकोच समेत कवि, कहैं सीय सम तुल ॥

६४ मिथ्याध्यवसिति

(The False Determination)

मिथ्याध्यवसिति झूठ हित, कहै जु झूठी रीति ।

धरै जु माला नभ कुसुम, करै सु पुरतिय प्रीति ॥

मिथ्या=झूठ, अध्यवसिति=यह ऐसा ही है ऐसा ठान लेना, यथा—

१ कमठ पीठ जोमहिं बहु बारा । बंध्यासुने बरु काहु मारा ॥

२ बारि मर्ये घृत होय बरु, सिकताते बरु तेल ।

६५ ललित

(Artful Indication)

ललित कह्यो कलु चाहिये, ताही को प्रतिविंब ।
सेतु बांधि करिहौ कहा, गयो उतरि अय अंब ॥

केवल प्रतिविंब वाक्य कह करहीं अभिप्राय सूचित करना, यथा—

१ सुनिय सुधा देखिय गगल, सब करतूत कराळ ।

जहँ तहँ काक उलूक बरु, मानस सकुत मराल ॥

अमृत केवल सुनने में आता है विष साक्षात् देखा जाता है अर्थात् राम राज्य केवल सुनने में आया देखने में नहीं ।

२ लिखत मुधाकर लिखिगा राह । विधि गति बाम सदा
सब फाह ॥

अभिप्राय यह है कि रामजी का राज्याभिषेक तो न हुआ उन्हा बनवास होगया ।

३ यद पापिनिहिं मूक का परंज । छाय भवन पर पावक परंज ॥

६६ प्रहर्षण

(Harpturn)

(१) तीन प्रहर्षण जतन चिन, बाँछित फल जो होय ।

जाको चित चाहत हुतो, आर्डिदूती सोय ॥ यथा—

१ चिनसन गंग गेडे दिनगानी । सब मनु देखि दुशानी छापी ॥

नाथ मकल माधन मे दीना । कौन्ही कसा जानि जय दीना ॥

२ जो रणा करिहीं मन मारी । इहि बगान बनु दूर न मारी ॥

३ मुनु सिय सत्य असीस हमारी । पूजिहि मन कामना तुम्हारी ॥

४ सुफल मनोरथ होयें तुम्हारे । राम बखन सुनि भये सुखारे ॥

(२) वांछित हूतें अधिक फल, श्रम विन लह मनमान ।

दीपक को उद्यम कियो, तौलों उदयो भाना ॥ यथा—

१ धरदु धीर हुइ है सुत चारी । त्रिभुवन विदित भक्त भयहारी ॥

(मांगने गये थे एक मिले चार)

२ सुनत वचन विसरे सब दूखा । तृपावन जिमि पाय पियुषा ॥

(३) सोधत जाके जतन को, वस्तु चढ़ै कर आन ।

निधि अंजन की औषधी, सोधत लह्यो निदान ॥

जमीन में गड़े हुए धन के प्राप्त्यर्थ अंजन की औषधी
ढूँढ़तेही जमीन का गड़ा हुआ धन मिल गया, यथा—

१ यह विधि मन विचार कर राजा । आय गये कपि
सहित समाजां ॥

२ हरि की सुधि को राधिका, चली अली के भौन ।

हँसत बीचही मिलि गये, वरणि सकै सुख कौन ॥

६७ विषाद

(Despondency)

सो विषाद चित चाहते, उलटो कलु हो जाय ।

राज्य देन कहि दीन बन, विधि गति जानि न जायायथा

१ केशन तुम ऐसी करी, बैरिउ करिहै नाहि ।

चंद्र बदन मृग लोचनी, बावा कहि कहि जाहि ॥

२ लिखत सुशकर लिखिगा राह ।

यह उदाहरण व्यंग्यार्थ से विपाद है "ललित में यति-
धिष भाव तथा वाच्यार्थसे ललितालंकार है (उभयालंकार)

३ उड़िहैं खिलिहैं कमल जब, निशि धीरे पर आत ।

यों सोचन अलि कोशगत, करि बिनम्यो जल जात ॥

६८ उल्लास

(Abandonment)

गुण औ गुण जब और के, और धरे उल्लास ।

तिय के तन पानिप बढे, पिय के नैननि प्यास ॥

(१) गुण से गुण

१ न्हाय संत पावन कर, गंग धरे यह आस ।

२ जे इर्यहि पर संपति देखी ।

३ अठ सु ररहि सत्संगति पाई ।

अगर इसके साथ दूसरा पद "पारम करनि कृपातु
सुदाई" लगावें तो यह दृष्टालंकार होगा ।

४ मजन फल देखिय तत्काल । फल होहि बिक बकरु मराना ॥

(२) गुण से दोष

१ निय के तन पानिप बढे, पिय के नैननि प्यास ।

२ जरहि सदा पर संपति देखी ।

(३) दोष से गुण

१ पराईन दानि साथ निज के ।

२ मल परिहास होय हित मोग ।

३ सुखी होहि पर विनि विनिमो ।

४ यह भल बाग नरक पर मराना ॥

(४) दोष से दोष

१ दुखित होहिं पर विपत्ति विशेषी ।

२ कुटिल कूबरी संगतें, भये त्रिभंगीलाल ॥

६९ अनुज्ञा

(Permission)

होत अनुज्ञा चाहतें, दोषहिं गुण ठहराय ।

लगै कलंक निशंक तौ, मिलौ मोहनै जाय ॥

अनुज्ञा=आदेश, हुकुम, इजाजत, यथा—

रामहिं चितय सुरेश सुजाना । गौतम शाप परम दित माना ॥

७० अवज्ञा

(Disregard)

(१) होत अवज्ञा और के, औरहिं नहिं गुण दोष ।

परम सुधाकर किरण तें, खुलैं न पंकज कोप ॥

अवज्ञा=अनादर, अवहेलना । इसका एक भेद निरस्कार और है ।

(एक का गुण दूसरा न गई)

१- लोटा बोले समुद्र में, अधिक न जल कछु लेत ।

२ राजत शिव के भाल तऊ, शशि धोयो न कळक ।

३ उत्तर बरसे तृण नहिं जामा ।

(एक का दोष दूसरा न गई)

१ चंदन विष लागै नहीं, लपटे रहैं भुजंग ।

२ पत्र न लहै करीर, दोष बसंतहि को कहा ।

चातक मृग नहिं नीर, दोष मेघ को ना कह ॥

तिरस्कार (The Contempt)

(२) तिरस्कार कलुष दोष सों, त्याग वस्तु गुणमान ।

वा सोने को जारिये, जामों टूटे कान ॥ यथा—

१. सो सुख धर्म कर्म जरि जाऊ । जहँ न राम पद पंक्तु भाऊ ॥

२. कहु परगन में जो बने धना मन में न लागे हरि जन में
तो धूरु ऐसे धन में ।

७९ लेश

(Suggestion)

लेश दोष में गुण लखे, गुण में दोष अधीर ।

काक कटुक निधरक फिरत, परत पीजरे कीर ॥

(दोष में गुण लखें)

१. काक कटुक निधरक फिरत ।

२. जो नहिं होत मोट अति मोही । मित्रितैं तान पवन
विधि तोही ॥

३. कदा फटी बाकी दशा, हरि भाजन के ईश ।

विह उराल जगिषो लागे, परिषो भई अमीस ॥

४. पालि परमदिन जागु प्रमाद । मित्रो राम सुम समन विपाद ।

(गुण में दोष लखें)

१. पवन पीजरे कीर । पीजरे पानी पीजरे ।

२. जोहि दीन गुण सुनन गुणन । वन्दे दीन गुण न कान ॥

७२ मञ्ज

(The Jewel)

मुञ्ज प्रभुत पद विदय, तोरे पद प्रदान ।

भन मराव जकि भरे, मुद पद मानन दान ॥

‘राग’ लाल रंग को भी कहते हैं, यथा—

१ चंदन विष व्यापै नहीं, लपटे रहत भुजंग ।

२ पायस पालिय अति अनुरागा । होहि निरामिष कबहुं
कि कागा ॥

३ राखौ भेलि कपूर में, हांग न होत सुगंध ।

इस अलंकार में गुण शब्द रूप रस गंधादिवाची माना जाता है ।

७७ अनुगुण

(The Conformity)

अनुगुण संगति ते जबै, पूरण गुण सरसाय ।

मुक्त माल हिय हास्य तें, अधिक सेत हो जाय ॥

अनु=बढ़ना, दूसरे के संग से अपना पहिले वाला गुण बढ़े, यथा—

१ मज्जन फल देखिय तत्कालाकाक होहि पिक बक्रहु मराला ॥

२ मणि माणिक मुक्ता छवि जैसी । अहि गिरिगज सिर
सोहने तैसी ॥

नृप किरीट तरुणी तन पाई । लहहि सकल सोभा अधिकारि ॥

३ चंपक हरवा अंग मिलि अधिक सोहाय ।

७८ मीलित

(The Lost)

मीलित जो सादृश्य तें, भेद न जबै लखाय ।

अरुण वरण तिय चरण पै, जावक लख्यो न जाय ॥

मीलित=मिला हुआ, यथा—

ॐ यह उदाहरण उल्लास में भी घटित होता है (गुण से गुण)

भतार्थ उभयालङ्कार ।

१. वेणु हरित मणिमय सत्र कीन्हें । मरल सपर्ण पगहिं नहिं चीन्हें ॥

२. पेंसुगी लगी गुलाब की गाल न जानी जाय ।
मीलित में नीच गुणवाली वस्तु श्रेष्ठ गुणवाली वस्तु में
बिलीन हो जाती है ।

७६ सामान्य

(The Samanya)

सामान्य जु सादृश्य तें, जानि परे न विशेष ।
नाहिं फगक श्रुति कमल अरु, तिय लोचन अनिमेष ॥

जहा भेद रहने हुए भी सादृश्य से कोई विशेषता न
दिखाते हुए जो दाख्य कहा जाय वह सामान्यालङ्कार है जैसे—
अनिमेष (खुले हुए) तिय के नेत्रों में और कान में राँसे हुए
कमल पुष्प में कोई अंतर नहीं देख पड़ता, यथा—

१. एक रूप तुम भ्राता दोऊ ।

२. भरत राम एकै अनुदारी । राइसा लखि न मरि नर नारी ॥

३. गिरा अर्थ अल वीचि सय, बहियत भिन्न न भिन्न ।

८० उन्मीलित

(The Uplait)

उन्मीलित सादृश्य तें, हेतु भेद कलु मानि ।
कीरनि आगे तुहिन गिरि, छुप पर्य है जानि ॥

उन्मीलित = खोला हुआ, उगाया हुआ, खरों दिया हुआ,
जैसे नीचे वाली विलीन और लक्ष्य है कि समवे मरे
दिखावन भी बिना छुप हुए जान नहीं पड़ता, यथा—

- १ वदो संत असज्जन चरणा । दुख प्रद उभय बीच कछु वरणा ॥
- २ सम प्रकाश तम पाख दुहुं, नाम भेद विधि कीन ।
शशि पोषक शोषक समुक्ति, जग जस अपजस दीन ॥
- ३ चंपक हरषा अंग मिलि, अधिक मुहाय ।
जानि परै सिय हियरे, जब कुंभिलाय ॥

८१ विशेषक

(The Un sameness)

वहै विशेषक जो फुरे, निश्चय समता मांझ ।

जानै तिय मुख अरु कमल, शशि दर्शनतें सांझ ॥

विशेषक=विशेष करके जो परीक्षा में पाया जाय, जैसे—
तालाब में तैरती हुई नायिका के मुख और कमल में भेद नहीं
जान पड़ता संध्या समय चंद्र दर्शन से कमल मुंदने पर जान
पड़ता है, यथा—

- १ सोइ सर्वज्ञ गुणी सोइ ज्ञाता । राम चरण जाको मन राता ॥
- २ जानि परत हैं कांक पिक, ऋतु बसंत के माहिं ॥

उन्मीलित में हेतु की और विशेषक में समय वा अवसर की
अपेक्षा है ।

८२ गूढोत्तर

(The Secret Reply)

(१) गूढोत्तर कछु भाव तें, उत्तर दीने होत ।

हों में दशनन मध्य ज्यों, जीभ विचारी होत ॥

इसमें कहीं प्रश्न पूछने पर उत्तर होता है और कहीं प्रश्न
मान लिया जाता है और उत्तर होता है यथा—

१. मुनहु पवनसुत रहनि हपारी । जिमि दशनन महँ जीभ विचारी ॥
२. कह दशकठ कवनतैं वदर । मैं रघुवीर दूत दशकधर ॥

चित्रोत्तर

(The Skilful Reply)

- (२) चित्र प्रश्न उत्तर दुहु, एकहि पद में होय ।
को है जारत अग्नि धिनु, कोरे नेह न होय ॥

प्रश्न-बिना अग्नि कौन जलाता है, उत्तर कोह=क्रोध ।

प्रश्न-सेह विहीन पुरुष को क्या कहते हैं, उत्तर=होता ।

प्रश्न-का वर्षा जब कृपा मुखाने का=क्या, का=कृपा ।

प्रश्न-तात रुदातैं पाती आई, उत्तर=नात कहते=नात के पाम से ।

- (३) के अनेकही प्रश्न को, एकहि उत्तर धार ।

वारि बताय विहारि मृग, सर न नवेली नार ॥

प्रश्न-जल बताओ, मृग की शिकार करो, उत्तर सर नहीं ।

पथी प्यासा जाय, गदगद गसो उदास क्यों ।

उत्तर दीन बताय, एक उचन 'लोम नरों' ॥

शब्दान्तर में जो प्रहेलिका हैं वे शब्दांतों हैं जो

मंडलिका अर्थात् गत हैं वे चित्रोत्तर अर्थात् के अन्तर्गत जानना चाहिये, यथा—

१. पानी में निमि टिन रहे, जाके दाढ़ न पाम ।

क्रोध कहें तबहार को, फिर पानी में पाम (दुःख का दोग) ।

२. शीश जटा पोथी गई, स्वेन चमन नन साई ।

गोपी जगम है नहीं, छायाग पौरेन नाई ॥ (निश्चय)

३. पापी पापी जल भरी, ऊपर बारी भाग ।

गई बनाई पापुगी निरान्तो दासों नाग ॥ (निश्चय)

४ मिर पर सां है गंग जल, मुडमाल गल माहिं ।
चाहन बाको वृषभ है, शिव कठिये की नाहिं ॥ (रहैट)

८३ सूक्ष्म

(The Subtle)

सूक्ष्म पर आशय लखे, करै क्रिया कलु भाय ।
मैं देख्यों उन शीश मणि, केशन लियो छिपाय ॥

सूक्ष्म-इशारा देखकर कुछ क्रिया के इशारे से ही उत्तर देना
शीश फूल काले वालों में छिपाने से इशारा निकलना
कि अभी चादनी है अंधेरे में मिलेंगे, यथा—

१ सुनि केवट के बैन, प्रेम लपेटे अटपटे ।

बिहंसे करुणा ऐन, चितै जानकी लखन तन ॥

२ सीतहिं सभय देखि रघुराई । कहा अनुज सन सैन गुभाई ॥

८४ पिहित

(The Covering)

पिहित छिपी पर बात को जानि दिखावै भाय ।
प्रातहिं आये सेज पिय, हंसि दावत तिय पाय ॥

पिहित=आच्छादित, छिपा हुआ व छिपी हुई, यथा—

१ मती कपट जाना सुरस्वामी ।

२ जोरि पाणि प्रभु कीन मणामू । पिता समेत लीन्ह निज नामू ॥

८५ व्याजोक्ति

(The Dissembler)

व्याज उक्ति कलु और विधि, कहे दुरै आकार ।

सखि सुक काटे अधर ये, दंतनि जानि अनार ॥ यथा—

१ नामप्रताप भानु अवनीसा । तामु दूत में सुनहु मुनीसा ॥

२ बहुरि गौरि कर ध्यान करेहू । भूप किशोर देखि किन लेहू ॥

छेकापहनुति में निषेध से छिपाना है, व्याजोक्ति में गुप्त भेद

परगट होजाने पर किसी बहाने से उसको बिना निषेध छिपाना है।

८६ गूढोक्ति

(The Sarcy)

गूढोक्ती मिस और के, करे और सों बात ।

काल सखी में जाउँगी, शिव पूजन परभात ॥ यथा—

पुनि आवन यदि बिरिया कानी ।

अस कहि मन विहँसी इक आली ॥

इस अलंकार में कहने वाले का तात्पर्य किसी दूसरे

मुनने वाले से होता है जिससे बात कही जाती है उससे नहीं

प्रस्तुतामृग में कहने वाले का मुख्य तात्पर्य उससे होता है

जिसके प्रति बात कही जाय ।

८७ विवृतोक्ति

(Open Speech)

विवृतोक्ति है ऐन, श्लेष द्विषो परगट किये ।

कहन जनाये मन, रूप भागो पर येन ते ॥

विवृत=उघाड़ा हुआ, उक्ति कथन, जो छिपा भाग्य या
सो मन शब्द ने व्योक्त किया, यथा—

१ येनि विनम्र न करिय उप, माभिय मरे नमान ।

गुनिन गुणमल नषादि नर, मय होदि उग्रान्न ॥

२ श्रीनि विशेष समान मन, करिय नीति नम आदि ।

जो रुपमनि यथ मंदरुनि, भन हि वरे कोटि मदि ॥

८८ युक्ति

(Covert Speech)

युक्ति यहै कीन्हे क्रिया, मर्म छिपायो जाय ।
पीय चलत आंसू चले, पोंछत नैन जँभाय ॥

युक्ति=चतुर्गई, हिकमत, यथा—

१. बहुरि बदन विधु अचल हाँकी। पिय तन चितै भौंह करि बाकी॥
खजन मंजु तिरीछे नयननि । निज पिय कहेउ तिनहि
मिय सैननि ।
२. लिखत रही पिय चित्र तहँ, आवत लिख सखि आन ।
चतुर तिया तिहि कर लिखे, फूलन के धनु बान ॥
३. वेद नाम कहि अँगुरिन खड अकास ।
पठ्यो सूपनखाहि लखन के पास ॥

वेद=श्रुति, कान । अकास=नाक ।

८९ लोकोक्ति

(Popular Say ng)

लोक उक्ति कह नूति जम, तस प्रसंग के ठाँव ।

राजा करे सो न्याय है, पांसा परे सो दाँव ॥ यथा—

१. चलौ सखी उत जाइये, जहा बसै ब्रजराज ।
गोरस वेचत हरि मिलै, एक पथ दो काज ॥
२. कर्म प्रधान विश्व की राखा । जो जस करै सो तस फल चान्वा ।
३. महादेव अवगुण भवन, विष्णु सकल गुणधाम ।
जिहि कर मन रम जाहि सन, ताहि ताहि सन काम ॥
४. देव कहा हम तुमहि गुमाई । ईधन पात कि रात मिताई ॥

- ५ आरत कहाँ विचारन काऊ । मूढ जुवारिहि आपन दाऊ ॥
 ६ दृष्टा मरहु जनि गाल बजाई । मन मादक नहि भूख बुताई ॥
 ७ सिय रघुबीर कि कानन योगू । कर्म प्रधान सत्य कह लोगू ॥
 ८ भा विधना प्रतिकूल जयै, तर ऊट चढ़े पर कूकर फाटत ।
 प्रसंग वर्णन के साथही लोकोक्ति घटित करने से लोकोक्ति
 अलंकार होता है, केवल लोकोक्ति, अलंकार नहीं ।

९० छेकोक्ति

(The Skilful Speech)

छेक उक्ति लोकोक्ति को, साभिप्राय बखान ।
 चोरी को गुड़ हे सखी, अति मीठो जिय जान ॥

छेक=चतुर, उक्ति कथन साभिप्राय=मनलब के साथ, यथा—

१ सत्य सराहि कहेउ पर देना । जानेहु लेशहि मांग चबेता ॥

२ स्वग जाने स्वगही की भाषा । ताते उषा गुप्त करि राखा ॥

३ जानत एक धुनगही, सखि ' धुनंग के खोज ॥

९१ वक्रोक्ति

(The Crooked Speech)

वक्र उक्ति स्वर श्लेष सों, अर्थ फेर जय होय ।
 गलिक अपूर्व हो पिया, बुरो कहत नहि कोय ॥

वक्र=टेढ़ा, यथा—

१ मैं गुहृमारि नाथ बन योगू । तुमहि उचित न भो कह भोगू ॥

२ भरत कि राखर पू न दोरी । आनेहु मोल रिमादि कि पोरि ॥

३ धर्म शीलता नव जग जगो । पात दरत दमदु बड़ भाग ॥

४ गानि परी नुहं प्रसुजी कलि बान के दानि यी

गो गोभी ॥

६२ स्वभावोक्ति

(Description of Nature)

(१) स्वभावोक्ति तहँ जानिये, जहँ स्वभाव कहि जाय ।
फगकत फांदत फिरत फिर, तुव तुरंग रघुराय ॥

- १ भोजन करत चपल चित, इत उत अवसर पाय ।
भागि चलत किलकात मुख, दधि ओदन लपटाय ॥ यथा—
- २ कहहु स्वभाव न कुलहि प्रशसी ॥ कालहु दरहि न रण रघुवंसी ॥
- ३ रघुकुल रीति सदा चलि आई । प्राण जायँ बैरु बचन न जाई ॥
- ४ सत्य कहहु गिरि भव तनु एहा । हठन छूट छूटे बर देहा ॥
- ५ सीस मुकुट कटि काछनी, कर मुरली उर माल ।
यह बानिक मो मन बसौ, सदा बिहारी लाल ॥

(२) उक्ति प्रतिज्ञा बंध जहँ, भेद दूसरो आय ।
अवसि इंद्रजित हतहुँ बरु, शंत शंकरहुँ सहायायथा

- १ तोरहुँ छत्रक दंड जिमि, तब प्रताप रघुनाथ ।
जो न करहुँ प्रभु पद शपथ, पुनि न धरँ धनु हाथ ॥
- २ शिव सकल्प कीन मन माहीं । यहि तन सती भेट अब नाहीं ॥
- ३ जो शत शंकर करै सहाई । तदपि हती रण राम दुहाई ॥

६३ भाविक

(The Vision)

भाविक भूत भविष्य को, पगतिछ कहत बखान ।
ऐसो भयो न होय गो, जैसो यह चलवान ॥

भाविक=भाव की रक्षा करने वाला, यथा—

- १ भयउ न अहइन अर हुनिदारा । भूप भरत जस पिता तुम्हारा ॥ (भूतप्रत्यक्ष)
- २ जहँ मुनियन सग वाम करि, चरित कीन अभिगम । चित्रकूट में जानिये, अबहू राजत राम ॥ (भूतप्रत्यक्ष)
- ३ जिन चलाइये चलन की, चम्चा श्याम मुजान । मैं देखति हँ बाहि यह, बात सुनत विन प्राना ॥ (भानीप्रत्यक्ष)

६४ उदात्त

(The Exalted)

हे उदात्त महिमा कथन, जहँ उपलब्धित अन्य ।
राधा कृष्ण विहार थल, बंसी बट बट धन्य ॥

उदात्त=श्रेष्ठ, इसमें महिमा और संपत्ति की भेद्यता अन्य को उपलब्धित करके कही जाती है, यथा—

- १ जो संपदा नीच गृह मोटा । मो बिलोकि सुनायक मोटा ॥
- २ जेहि तिरहुत तिहि समय निहारी । निद्रिहणु लाग सुनन दश घारी ॥
- ३ सो रह एतावन जहां, रच्यो राम नंदलाल ।
मुरली मगुर यजाय के, मोही भव धमवान ॥

६५ अत्युक्ति

(Exaggeration)

अति उक्ती अतिशय कथन. दान सुजम बल रूप ।
जायक तेरे दान तैं. भये कल्ल नर भूर ॥

अतिउक्ति=कहती बढ़ाकर कहना, दुराविद्या. यथा—

- १ नरपग दान दीन सर काहु । जिन पारा दाना मति म ॥
- २ देखि दुपारी लठ की, हाटहुं मरउ और

३ जासु त्रास डर कहँ डर होई ।

४ भूपण भार सँभारि है, क्यों वह तन सुकुमार ।

सूधे पांय न धरि सकत, महि शोभा के भाग ॥

५ श्याम गौर किमि कहौ वखानी । गिरा अनयन नयन
विनु वानी ॥ *

६ देव देखि तव बालक दोऊ । अब न आंख तर आवत कोऊ *

७ राम न सकहि नाम गुण गाई ।

६६ निरुक्ति

(Exposition)

निरुक्ति नाम के योग तें, अर्थ प्रकल्पन आन ।

ऊधव कुब्जा वस भये, निर्गुण वहै निदान ॥

निर+उक्ति=वचन को जोड़ देना ।

हे ऊधव जो कुब्जा के वश हुए वे निश्चय ही निर्गुण हैं
यहां निर्गुण का अर्थ सत रज तम रहित नहीं बरन अज्ञान
हुआ, यथा—

१ नाम उदार प्रताप दिनेशा ।

(यहां भानु प्रताप को प्रताप दिनेशा कहा)

२ कनक कलित आहिबेलि बनाई । लखि नहि परै सपन मुहाई

(यहां नागबेलि को आहिबेलि कहा)

३ दोष भरे इमि चरित तुव, तव दोषा कर नाम ।

(दोषा कर दोष का आकर और रात्रि करनेद्वारा चंद्र)

४ वृथा विरस बातें कति, लेति न हरि को नाम ।

यह न आचरज है कछू, रसना तेरो नाम ॥

५ छीनी छवि मृग मीन की, कहौ कहा की रीति ।

नामहि में नहि नीति का, करै नयन ये नीति ॥

* उभयालङ्कार देखो काव्यालङ्कार ।

६७ प्रतिषेध

(Prohibition)

सो प्रतिषेध प्रसिद्ध जो, अर्थ निषेध्यो जाय ।
मोहन कर मुरली नहीं, है कलु वड़ी वलाय ॥

प्रतिषेध=रोकना, मना करना, यथा—

- १ निपटहिं द्विज करि जानेसि मोही । मैं जस विप्र सुनावी तोही ॥
- २ कालनेम सम मैं नहीं, मुनहुं वीर दनुमान ।
- ३ सिय कंकण को छोरियो, धनुष तोरियो नारि ।

६८ विधि

(Fitness)

अधिकहियत हैं सिद्धि जब, अर्थ साधिये फेर ।
कोकिल है कोकिल जबै, ऋतु में करिहैं टेर ॥ यथा—

- १ विश्व भरण पोषण करु जोई । ताकर नाम भरत अम होई ॥
 - २ जाके सुमिरन तैं रिषु नासा । नाम शत्रुहन बेद मदासा ॥
 - ३ गुरली मुरली होति है, मोहन के मुख लागि ।
 - ४ दीन दयाळु हमारी दरो दुख तो गुन दीनदयाल सरासो ।
- निरुक्ति में मन माना अर्थ फलित किया जाता है विधि
मिदार्थही पुन' रही कहा जाता है ।

६९ हेतु

(Cause)

- १) हेतु अलङ्कृत दोय विधि, कारण कारण सम ।
उदित भयो शशि मानिनी, मान मान को भोग ॥

यथा—

- १ अरुण उदय अवलोकहु ताता । पकज कोक लोक सुखदाता ।
- २ रघुकुल कमल सुजन सुखदाता । आये कुशल देव मुनि त्राता ॥
- ३ राम सरूप निहारतही, उर मोद बढ़यो मिथिलेश लली के ।

(२) कारण कारज ये जबै, लहत एकता पाय ।

मेरे ऋद्धि समृद्धि है, तुव दाया रघुराय ॥ यथा—

- १ करि राख्यो निर धार यह, मैं लखि नारी ज्ञान ।
वही वैद्य औषधि वहै, वही जु रोग निदान ॥
- २ सिया राम मय सब जग जानी । करौ प्रणाम जोरि जुग पानी ॥
- ३ परम पदार्थ चारिहुं, श्री राधा गोविंद ।
- ४ कोऊ कोयिक संग्रही, कोऊ लाख हजार ।
मो सम्पति यदुपति सदा, विपति विदारनहार ॥

१०० प्रमाण

(The Just)

कहिये वचन प्रमाण जब, वेद शास्त्र युत होय ।
सत्य वचन सब ते भलो, बुरो कहत नहिं कोय ॥

इसके ८ भेद हैं —

आठ भेद प्रत्यक्ष पुनि, अनुमान उपमान ।

शब्द अर्थापत्तिऽनुपलवधि, संभवं ऐतिह्य जान ॥

१ प्रत्यक्ष

मन अरु इंद्रिय विषय जो, सो प्रत्यक्ष बखान ।
ज्ञान हीन कुलहीन जऊ, पूजत सब धनवान ॥

१ तान जनकतनया यह सोई । धनुष यज्ञ जिहि कारण होई ।

१ समामोक्ति में भी देखो—उमयालकार । २ विक्षेप में भी
देखो—मयालकार ।

२ अनुमान

कारण लखि अनुमान तैं, कारज लीजे जान ।
धुवां देखि सब कोउ करत, आगी को अनुमान ॥

- १ नाचि अचानक डी उठे, विन पावस बन मोर ।
जानति हौं नंदित करी, यह दिशि नंद किशोर ॥
- २ भिन लुखरी मारी नहीं, कहा मारिहैं शेर ।

३ उपमान

उपमा की समता लखे, उपमे जानो जाय ।
सागर सो गम्भीर जो, सो समर्थ रघुराय ॥

४ शब्द

शास्त्र लोक को वचन जो, सोई शब्द प्रमान ।
धर्म बिना नहिं सुखल हे, गुरु विन लहे न ज्ञान ॥

मैं मम सरदार मैं बह कहर टट्ट ।
मैं हठीली नारि मैं यह पुरुष निखट्ट ॥
आत्मन मो मरि जाय हाथ लै मदिग प्याय ।
पूत बड़ा मरि जाय तु फूल में दाग लगाय ॥
पैं निगाउ राजा मैं नौद पदावर मोदये ।
पैंताल कैंद रिक्कम मुनी इनकें मरे न मोदये ॥

५ अर्थापत्ति

अर्थापत्ति में अर्थ को, जोग व्यर्थ है जान ।
तन हम चरतीं ना तुमों, नौ चरतीं कहु कौन ॥
यह देगी मैं पारंगती का निज नाने चरन है ।

६ अनुपलब्धि

जानि परै नहिं वस्तु कलु, अनुपलब्धि सो मान ।
राम तियहुं रावण हरी, है अदृष्ट बलवान् ॥

अन=नहीं, उपलब्धि=प्राप्ति ।

७ संभव

जहँ संभव है वस्तु को, संभव सोइ कहाय ।
चार जने मिलि गहि सवै, मेरुहिं देत हिलाय ॥

संभव में किसी वस्तु का हो सकना माना जाता है।
संभावना में शर्त रहती है कि ऐसा होवे तो ऐसा हो सकता है।

८ ऐतिह्य

ऐतिह्य कथा पुराण जो, ताही केर बखान ।
बलि द्वारे ठाढ़े अजहुं, श्रीहरि ज्यों दरबान ॥

ऐतिह्य=ऐतिहासिक ।



उभयालंकार

भूषण इकतैं अधिक जहँ, सो उभयालंकार ।
संस्पृष्टिरु संकर तहां, उभय भेद निरवार ॥

संस्पृष्टि

शब्दालंकार+शब्दालंकार

जुदे जुदे भासै सकल, अपनी अपनी ठाम ।
तिल तंडुल की रीति सों, हें संस्पृष्टि सुनाम ॥ यथा—
कगकी कगकी बर जुरी, धूर धूमरित वेद ।
कत मुरकन परसी परन, सुग्य सों मनो सनेह ॥
यहा यमक और छेकानुमास की संस्पृष्टि है

अर्थालंकार+अर्थालंकार

शशि सों उज्ज्वल मुख लमे, संजन हें मनु नैन ।
अधर नासिका धिन्ध्र शुक, मधुर सुधा से येन ॥
उपमा, उल्लेख और यथासम्भवं अनेकारों की संस्पृष्टि है ।

शब्दालंकार+अर्थालंकार

दग से दग हें याहि के, मुख मो भुगयी प्राप्ति ।
कर मे कर कटि नी कटि, उपमा उपजे प्राप्ति ॥
यहां छेकानुमास और अनेकारों की संस्पृष्टि है ।

६ अनुपलब्धि

जानि परै नहिं वस्तु कलु, अनुपलब्धि सो मान
राम तियहुं रावण हरी, है अदृष्ट बलवान

अन=नही, उपलब्धि=प्राप्ति ।

७ संभव

जहँ संभव है वस्तु को, संभव सोइ कहाय ।

चार जने मिलि गहि सबै, मेरुहिं देत हिलाय

संभव में किसी वस्तु का हो सकना माना जाता
संभावना में शर्त रहती है कि ऐसा होवे तो ऐसा हो सकता

८ ऐतिह्य

ऐतिह्य कथा पुराण जो, ताही केर बखान ।

बलि द्वारे ठाढ़े अजहुं, श्रीहरि ज्यों दरवान

ऐतिह्य=ऐतिहासिक ।



उभयालंकार

भूषण डकतें अधिक जहँ, सो उभयालंकार ।
संस्पृष्टिरु संकर तहां, उभय भेद निरधार ॥

संस्पृष्टि

शब्दालंकार+शब्दालंकार

जुटे जुटे भाँसे सकल, अपनी अपनी टाम ।
तिल तंडुल की रीति सों, है संस्पृष्टि सुनाम ॥ यथा—

करकी करकी घर चुगी, धूर धूसरित देह ।
फत घुरकत परसी परत, मुच मो मो सनेह ॥
यथा यमक और छेकानुनास की संस्पृष्टि है

अर्थालंकार+अर्थालंकार

शशि सों उज्ज्वल मुख लसे, संजन है मनु नेन ।
अधर नासिका विन्न शुक. मधुर मुधा मे वैन ॥
उपमा, उत्प्रेक्षा और यथामत्य भ्रमंकारों की संस्पृष्टि है ।

शब्दालंकार+अर्थालंकार

दृग से दृग हैं याहि के, मुख मो मुखी पराहि ।
कर से कर कटि नी कटी, उपमा उपजे फाहि ॥
यथा छेकानुनास और यथामत्य की संस्पृष्टि है ।

दोष कोष

अलंकारों के मुख्य २ दोष लिखे जाते हैं-यथासंभव उनसे
वचना चाहिये ।

(शब्दालंकार के दोष)

१ प्रसिद्धाभाव

अग्रमान कह बात जो, अनुप्रास के हेत ।
दोष प्रसिद्ध अभाव तिहि, भाषें सुमिति निकेत ॥ यथा-
दगि जात दारिद दिनेस ननया के कहे,
कहत कलिंदी के कन्हैया होत देर बिन ॥

२ वैफल्य

चमत्कार तो है नहीं, शब्दाडंबर मात्र ।
सो वैफल्य बखानिये, सुनि राखो सब छात्र ॥ यथा-
का बलमा बलमा बलमा, बलमा बलमा बलमा बलमा है ।

३ वृत्तिविरोध

वृत्ति रचें प्रतिकूल जे, नियमनि को नहीं सोध ।
रत्न में अनरस सम तिही, जानिय वृत्ति विरोध ॥ यथा-
उपटीकी टीकी प्रभाटीकी बबुटीकी नाभिटीकी धूर्जटी की
औ कुटीकी सपुटीकी है ।
यह शृंगार रस है उसमें कठोर वर्ण नहीं चाहिये उन्हीं
का यहां बाहुल्य है ।

दोष कोष

अलंकारों के मुख्य २ दोष लिखे जाते हैं-यथासंभव उनसे वचना चाहिये ।

(शब्दालंकार के दोष)

१ प्रसिद्धाभाव

अप्रमान कह बात जो, अनुप्रास के हेत ।

दोष प्रसिद्ध अभाव तिहि, भापें सुमिति निकेत ॥ यथा-

दरि जात दारिद दिनेस तनया के रुहे,

कहत कलिंदी के कन्हैया होत देर विन ॥

२ वैफल्य

चमत्कार तो है नहीं, शब्दाडंबर मात्र ।

सो वैफल्य बखानिये, सुनि राखो सब छात्र ॥ यथा-

का बलमा बलमा बलमा, बलमा बलमा बलमा बलमा है ।

३ वृत्तिविरोध

वृत्ति रचे प्रतिकूल जे, नियमानि को नहिं सोध ।

रस में अनरस सम तिही, जानिय वृत्ति विरोध ॥ यथा-

उपटीकी टीकी प्रभाटीकी बधुटीकी नाभिटीकी धूर्जटी की

औ कुटीकी सपुटीकी है ।

यह शृंगार रस है इसमें कठोर वर्ण नहीं चाहिये उन्हें

का यहां बाहुल्य है ।

४ अप्रयुक्त

यमक होय डक चरण में, दो में वा पुनि चार ।

अप्रयुक्त है तीन में, धरिये ताहि विचार ॥ यथा—

तोपर पारों उर वसी, सुन गरिके सुजान ।

तू मोहन के उर वसी, है उर वसी समान ॥

(अर्थालंकार के दोष)

१ न्यूनता

उपमेय से उपमान की (जातिगत)

चतुर सखिन के मृदु वचन, वासरजाय विताय ।

पे निशि मे चंडाल लों मारत यह शशि जाय ॥

यहा चद्रमा की तुलना चाडाल से दी है यही जातिगत न्यूनता है ।

उपमेय मे उपमान की (प्रमाणगत)

सोहत अनल पतंग सम, यह रवि रथ नभ धान ।

यहा रवि रथ की उपमा अग्नि की चिनेगारी से है जो अत्यन्त जोरदा है—यही प्रमाणगत न्यूनता है ।

उपमेय मे उपमान की (धर्मगत)

कृष्ण अजिन पट लगत मुनि, शुचि मौजियुन गान ।

नील मेघ के निकट जिमि, नभ दिन मणि विलसान ॥

इस दोहे में जिस प्रकार मुनि उपमेय के साथ काली-
हस्ता आदि पवित्र मौजों का वर्णन किया है उसी प्रकार

सूर्य उपमान के साथ केवल नीलमेघ धर्म का वर्णन किया है। मौंजी के समान दूसरा धर्म विद्युलता और कहना था सो नहीं कहा अतएव उपमान के धर्म की न्यूनता है।

२ अधिकता

उपमेय से उपमान की (जातिगत)

कमलासन आसीन यह, चक्रवाक विलसाहि ।

चतुरानन जुग आदि में, प्रजा रचने जिमि आहि ॥

यहां चक्रवाक उपमेय का ब्रह्मारूप उपमान देवजाति के होने से जातिगत अधिकता है।

उपमेय से उपमान की (प्रमाणगत)

दशनन वाके दिख परत, वज्र शिला अनुहार ।

यहां दांत उपमेय की समता वज्रशिला से की गई यही प्रमाणगत अधिकता है।

उपमेय से उपमान की (धर्मगत)

जस्त पीत पट चाप कर, मनहर बपु घनश्याम ।

तड़ित इंद्र धनु शशि सहित, ज्यों निशि में घनश्याम ।

यहां उपमेय श्रीकृष्ण का शंख धारण नहीं कहा गया उपमान नीलमेघ की राज्ञि में बिजली इंद्र धनुष तथा चंद्रमा सहित कथन किया यही धर्मगत अधिकता है।

३ व ४ उपमेय और उपमान के लिंग और वचन में भेद

कहे जायें कहु कौन विधि, या नृप के गुन कूल ।

सधुरे वच हैं दाख लों, चरिन चांदनी तूल ॥

उपमेय वचन पुल्लिङ्ग और बहुवचन, उपमान टाख
स्त्रीलिङ्ग और एकवचन, तथा चरित पुल्लिङ्ग बहुवचन, चादनी
स्त्रीलिङ्ग एकवचन, यही लिङ्ग और वचन का दोष है ।

५. कालभेद

रण में डमि शोभित भये, रामबाण चहुं ओर ।
जिमि निदाघ मध्याह्न मे, नभ रविकर खर घोर ॥

शोभित भये-भूतकाल, जिमि सूर्य फिरगें मध्याह्न में
होती हैं वर्तमान काल, अतएव अनुचित कालभेद ।

६. पुरुषभेद

राजत हो प्यारी ! रुचिर, पट कुसुंभ तन धारि ।
लाल सुवाल प्रवाल तरु, प्रभवलता अनुहारि ॥

उपमेय प्यारी (मध्यमपुरुष) उपमानरता (अन्यपुरुष)
यही दोष है ।

७. विधिभेद

नृप ! तव कीरति मम सदा, दिनकर फेर प्रकाश ।

सूर्य सूर्यही मनागमान है कीर्ति के ममान प्रकाशित नहीं
यही विधिभेद है ।

८ अप्रसिद्ध

काव्य चन्द्र रचना करत, अर्थ किरण जुत चारु ।

काव्य को चन्द्र और अर्थ को किरण कहना अप्रसिद्ध दोष है ।

९ असंभव

धनु मंडल तो परतु है, दीपत शर खर धार ।

जिमि रवि के परवेश तें, परत ज्वलित जल धार ॥

यहां धनुष से छूटे हुए दीप्त वाणों को सूर्य मंडल से गिरती हुई ज्वलित जलधाराओं की उपमा दी जाने से असंभव दोष है क्योंकि सूर्य मंडल से जलती हुई जलधाराओं का पतन असंभव है ।



न्याय

काव्य शास्त्र के बोध में, परत न्याय को काम ।
सोधि भानु परगट कियो, लोक उक्ति अभिराम ॥

१ अजापुत्र

जोर चले नहिं सबल सो, अवलहिं टीजे त्रास ।
अजापुत्र सो न्याय है, घरणन बुद्धि उजास ॥ यथा—

(१) 'अजा पुत्रं रलि दद्यात्' । इसे यों पढ़ो अजा पुत्रन
न्याय, ऐमेही ऋषु व्यजनान में सर्यत्र जानो ।

(२) बल सों मन चेतो कैं, कोउ न आइन पाय ।
न्याय सबल परतच्छ है, राजा कैं सो न्याय ॥

(इसका सबल न्याय भी कहते हैं)

२ अरण्य रोदन

जाकी जवै गुहार, रहत बहुत में अनसुनी ।
हो उद्योग असार, है अरण्य रोदन स्वई ॥ यथा—
को नगाखाने गुने तूनी की आशाग ।

३ अरुन्धती

सूक्ष्म वस्तु बोधार्थ जहैं, कमतें थूल यतात ।
गुरुजन ताही कहत हैं, न्याय अरुन्धति तात ॥ यथा—

ब्रह्म निरूपणार्थ प्रथम हैन भाव का दूर परना पद्यात
तन्वों का विचार सदुपगान् जीर मरति आदि के बोध होने के
अनन्तर सूक्ष्म प्रत्यक्षान की प्राप्ति करात ।

४ अंधकवर्तिकीय

अंधक वर्तक वस्तु जहँ, अकस्मात मिलि जाय ।
अंधे हांथ वटेर ज्यों, लागी हिय हरषाय ॥

५ अंधगज

जहँ निज निज अनुमान, वस्तु अदेखी वरणिये ।
वरणत सबै सुजान, अंध गजहि सो न्याय है ॥ यथा—
अगों ने हाथी का जो जो अग टटोला हाथी का रूप
वैमाही बताया ।

६ अंधादर्पण

मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलैं विरंचि सम ।
वरणत बुद्धि निकेत, अंधा दर्पण न्याय स्वइ ॥
इसी को ऊपरदृष्टि न्याय कहते है ।

७ अंध परम्परा

चाल पुरानी पर चले, मर्म न जाने कोय ।
सोई अंध परम्परा, भाषत हैं कवि लोय ॥
सू०—यदि मर्म जाने तो अंधपरम्परा नहीं ।

८ कदलीफल

सूधी बातन तैं जहां, कारज निकसे नाहि ।
कदली फल सो न्याय है, नीच निसानी आहि ॥

६ काकतालीय

होनी 'माहीं' निमित्त कलु, अकस्मात् लागि जाय ।

न्याय काकतालीय त्यहि, वरणात् कवि समुदाय ॥

ताड़ वृक्ष के नीचे से उड़ते हुए काँए पर अकस्मात् ताड़ फल का टूट गिरना और डमरू काँए की मृत्यु होना जैसे वह पुरुष मरनेही को या अकस्मात् किसी का धका लगने से निम्माण हो गया ।

१० कूपमण्डूक

घर तजि बाहर की खबर, जाहि न रहत कलूक ।

अल्प ज्ञान के कारणे, न्याय कूप मण्डूक ॥

११ कूर्मार्ग

जाको जो विस्तार है, ताहीं माहिं समाय ।

नष्ट नहीं अदृष्ट स्वई, कूर्मार्ग है न्याय ॥

१२ केमुतिक

सिंह हन्यो निज बाहु बल, कहा स्यार की बात ।

जहां होत कह नूति अस, सो केमुतिक कहात ॥

जाहि सकन हनि म्याग तौ, फटा सिंह की बात ।

जहां होत फटनूनि अस, स्वउ केमुतिक कहात ॥

१३ कीण्डिन्य

नीको है यदि होत यह, औरहु नीको होत ।

सो कीण्डिन्य न्याय है, वरणात् सवि कवि गीत ॥

४ अंधकवर्तिकीय

अंधक वर्तक वस्तु जहँ, अकस्मात् मिलि जाय ।
अंधे हांथ बटेर ज्यों, लागी हिय हरपाय ॥

५ अंधगज

जहँ निज निज अनुमान, वस्तु अदेखी बरेणिये ।
वरणत सबै सुजान, अंध गजहि सो न्याय है ॥ यथा—
अंगों ने हाथी का जो जो अंग टटोला हाथी का रूप
वैमाही बताया ।

६ अंधादर्पण

मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलैं विरंचि सम ।
वरणत बुद्धि निकेत, अंधा दर्पण न्याय स्वइ ॥
इसी को ऊपरदृष्टि न्याय कहते है ।

७ अंध परम्परा

चाल पुरानी पर चले, मर्म न जाने कोय ।
सोई अंध परम्परा, भाषत हैं कवि लोय ॥
सू०—यदि मर्म जाने तो अंधपरम्परा नहीं ।

८ कदलीफल

सूधी बातन तें जहां, कारज निकसे नाहि ।
कदली फल सो न्याय है, नीच निसानी आहि ॥

६ काकतालीय

होनी माहीं निमित्त कलु, अकस्मात् लगि जाय ।

न्याय काकतालीय त्यहि, वरगुत्त कवि समुदाय ॥

ताड़ वृक्ष के नीचे से उड़ते द्रुप कौण पर अकस्मात् ताड़
फल का दृढ़ गिरना और उमभे कौण की मृत्यु होना जैसे यह
पुरुष मरनेही को था अकस्मात् किसी का प्रण लगने से
निष्प्राण हो गया ।

१० कूपमण्डक

घर तजि बाहर की खबर, जाहि न रहन कहूँक ।

अल्प ज्ञान के कारणे, न्याय कूप मण्डक ॥

११ कूर्मार्ग

जाको जो विस्तार है, ताहीं माहिं नमाय ।

नष्ट नहीं अदृष्ट स्वई, कूर्मार्ग है न्याय ॥

१२ कैमुतिक

सिंह हन्यो निज घाहु बल, कहा स्यात् की धान ।

जहां होत कह नृति अस, सो कैमुतिक कहान ॥

जाति मयन दानि स्यात् नो, कहा सिंह की शान ।

जहां होत कहनृति भ्रम, स्यात् कैमुतिक कहान ॥

१३ कौण्डिन्य

नीरो है यदि होन यह, व्योमह नीरो होन ।

सो कौण्डिन्य न्याय है, वरगुत्त यदि कवि होन ॥

१४ गङ्गुरिका प्रवाह

एक चले सब चलि परत, नहिं कलुं ठीक ठिकान ।
सो गङ्गुरी प्रवाह जिहिं, कहियत भेड़ धसान ॥

१५ गणपति

जहें थोड़ीसी युक्ति सों, साधत कार्य्य महान ।
सोई गणपति न्याय है, बरणत बुद्धि निढान ॥

जैसे गणपतिजी पृथ्वी में राम नाम लिखकर उसकी
प्रदक्षिणा करके प्रथम प्रजनीय हुए ।

१६ घटप्रदीप

चहै भलाई आपनी, कबहुं न पर उपकार ।
घट प्रदीप सो न्याय है, बरणत बुद्धि उदार ॥

१७ घुणाक्षर

कलुं करत कलुं योग सों, चित्र कलुं बनि जाय ।
सोई कवि जन के मते, होत घुणाक्षर न्याय ॥

१८ चंद्र चंद्रिका

जाको गुण जब जाहि सों, कबहुं जुदो नहिं होय ।
भली भांति लखि लीजिये, चंद्र चंद्रिका सोय ॥
इसको दिन-दिन पति न्याय भी कहते है ।

१९ जल तरंग

जब जाही को रूप कलुं, विलग न तासों होय ।
शब्द मात्र की भिन्नता, जल तरंग है सोय ॥

२० जल तुम्बिका

केनो गोपन कीजिये, तऊ प्रगट हो जाय ।

सोइ न्याय जल तुम्बिका, कहन सकल कविराय ॥

२१ तिल तण्डुल

मिले परस्पर हू जहां, वस्तू जुडी लखाय ।

तिल तण्डुल सों न्याय है, वरगुन युक्ति निकाय ॥

२२ दंड चक्र

जहां एक विन एक को, सरत नाहि जय काज ।

दंड चक्र है न्याय तहे, भाषत कवि सिरताज ॥

२३ दंडपूपिका

नष्ट भये अवलंब के, अवलंबिन को नात ।

कुत्ता लाठी ले गयो, बंधी पुरी काह आत ॥

(दंड-लाठी, पूपिका-पुर्ष)

२४ देहलीदीपक

देहरी दीपक न्याय मरद, घर याहि उजियार ।

गम नाम मणि दीप धर, जीर देहरी द्वार ॥

२५ नृसिंह

आधो शौरहि मर है, आधो शैवहि हर ।

सो नरसिंह न्याय है, घगगन पर सों नृसिंह ॥

२६ पिष्टपेषण

सिद्ध वस्तु की सिद्धि को, वृथा जतन जहँ ठान ।
कहत पिष्ट पेषणत्यही, कवि जन बुद्धि निदान ॥

२७ पंग्वन्ध (पंगु अंध)

जहां निबल द्वे करत हैं, इक की एक सहाय ।
बुध जन ताही कहत हैं, अन्धा पंगू न्याय ॥

इसे हदनक न्याय भी कहते हैं ।

२८ बीजांकुर

दो मे पहिलो कौन है, ठीक न जानो जाय ।
इक को कारण एक जहँ, सो बीजांकुर न्याय ॥

२९ मण्डूकप्लुति

विषय चलत औरै कलु, औरै कलु बतरात ।
मण्डूकप्लुति न्याय सो, कहत सुमति अवदात ॥

३० यत्त वृत्त

देखी हे नहिं काहुने, सुनी एक तें एक ।

यत्त वृत्त सो न्याय है, भापत कवि सविवेक ॥

जैसे-भाई इस वृक्ष में एक प्रेत है, प्रश्न क्या तुमने

उत्तर देखा तो नहीं हमारे काका कहते थे काका से
तो उन्होंने कहा हमारे बाबा कहते थे, ऐसेही और

३१ रात्रिदिवस

जब यह है तो वह नहीं, जहां होत निरधार ।
रात्रि दिवस सो न्याय है, भाषत सुकवि विचार ॥

३२ वृद्ध कुमारी वाक्य

जहँ थोरीसी बात में, मांग लेत बहु दान ।
वृद्ध कुमारी वाक्य त्यहि, चरणत सवे सुजान ॥

एक श्री तपस्विनी वृद्ध कुमारी पर देव प्रसन्न हुए
कहा, एकटी सरदान मांगो वृद्धा ने कहा केवल इतनाही मांगती
हूँ कि मैं अपने नाती के पती को भोजन के लिये (पाल) में
खाते हुए-देखू ।

३३ सुन्दोपसुन्दन

प्रयत्न गिपुन को परस्पर, होत जहां पर नाम ।
सुन्द उपसुन्दन न्याय नहै, चरणत कवि सहस्रनाम ॥

३४ मृची कटाह

अल्प अधिक के पूर्यही, जहँ निपटायो जाय ।
मृची कटाह न्याय नहै, भाषन कवि समुदाय ॥

मृची मृति, कटाह-करी, जैसे 'परिजात' में रसि है कि
कहिमें गुणधन सब विपरीत सदाय वरिष्ठ में हीन लगाने है ।

२६ पिष्टपेषण

सिद्ध वस्तु की सिद्धि को, वृथा जतन जहँ ठान ।
कहत पिष्ट पेषणत्यही, कवि जन बुद्धि निदान ॥

२७ पंग्वन्ध (पंगु अंध)

जहां निबल द्वे करत हैं, इक की एक सहाय ।
बुध जन ताही कहत हैं, अन्धा पंगू न्याय ॥

इसे हदनक्र न्याय भी कहते हैं ।

२८ बीजांकुर

दो में पहिलो कौन है, ठीक न जानो जाय ।
इक को कारण एक जहँ, सो बीजांकुर न्याय ॥

२९ मण्डूकप्लुति

विषय चलत औरै कलू, औरै कलू बतरात ।
मण्डूकप्लुति न्याय सो, कहत सुमति अवदात ॥

३० यत्न वृत्त

देखी हे नहि काहुने, सुनी एक तें एक ।

यत्न वृत्त सो न्याय है, भाषत कवि सविवेक ॥

जैसे—भाई इस वृक्ष में एक भेत है, प्रश्न क्या तुमने देखा है?

उत्तर देखा तो नहीं हमारे काका कहते थे काका से पूछा गया

तो उन्होंने कहा हमारे बाबा कहते थे, ऐसेही और भी जानो ।

३१ रात्रिदिवस

जब यह है तो वह नहीं, जहां होत निरधार ।
रात्रि दिवस सो न्याय है, भाषन सुकवि विचार ॥

३२ वृद्ध कुमारी वाक्य

जहँ थोरीसी बात में, मांग लेत बहु दान ।
वृद्ध कुमारी वाक्य त्यहि, घरणत सत्र सुजान ॥

एक अथी तपस्विनी वृद्ध कुमारी पर देव प्रसन्न हुए
कहा, पकड़ी घरदान पांगो वृद्धा ने कहा केवल इनकार। पांगरी
हू कि मैं अपने नानी के पंती को मोने के दादो (पाल) में
साते हुए - देनू ।

३३ सुन्दोपसुन्दन

प्रयत्न रिपुन को परस्पर, होत जहां पर नास ।
सुन्द उपसुन्दन न्याय तहँ, घरणत करि सहुलान ॥

३४ सूची कटाह

अन्य अधिक के पूर्वही, जहँ निपटाये जाय ।
सूचि कटाह न्याय तहँ, भाषन कवि समुदाय ॥

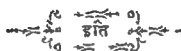
शुची=गुई, कटाह=कटार, जेते पयोषा में शोनि है कि
पानि गुनय मक्ष निपटाते पनायु बहिन में राय समाय है ।

३५ स्थालीपुलाक

हांडी में को एक कण, लखत होय अनुमान ।
सोई थाल पुलाक है, भाषत सुमति निधान ॥

३६ क्षीर नीर

और वस्तु जब और में, मिलि तन्मय हो जाय ।
पृथक् कण ति न कर सरस, क्षीर नीर है न्याय ॥



अथ अलङ्कार दर्पण ।

शब्दालङ्कार

गुरु पद पद्महिं नाय, सिर, सुमिरि शारदा माय ।
अलङ्कार दर्पण सजत, 'भानु' भेद विलगाय ॥
लक्षण लक्ष्यहिं कहउँ सब, थोरेही संकेत ।
गद्य पद्य में अति सुगम, शीघ्र बोध के हेत ॥
कहत सुनत समुभक्त ललित, बुद्धि बढ़ावनहार ।
शोभा कर अति काव्य को, अलङ्कार सुविचार ॥
यदपि सुजाति सुलच्छनी, सुन्दर सरस सुवित्त ।
भूषण विन न विराजई, कविता बनिता मिन ॥
ऐक वृत्ति धुनि छाट में, व्यंजन ही जो नार ।
अंत्यानुप्रासहिं करिय, स्वर दो श्रंत विचार ॥

विनि हो कि इस का नाम अलङ्कार है कि है अलङ्कार

अलङ्कार का अर्थ है कि जो शब्दों को अलङ्कार करने के लिये
उपयोग किया जाता है उसे अलङ्कार कहते हैं। अलङ्कार का अर्थ
है कि जो शब्दों को अलङ्कार करने के लिये उपयोग किया जाता है
उसे अलङ्कार कहते हैं। अलङ्कार का अर्थ है कि जो शब्दों को
अलङ्कार करने के लिये उपयोग किया जाता है उसे अलङ्कार
कहते हैं। अलङ्कार का अर्थ है कि जो शब्दों को अलङ्कार करने
के लिये उपयोग किया जाता है उसे अलङ्कार कहते हैं।

नाम	सक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
वैकानुप्रास	एक वा अनेक व्यंजनों की प्रावृत्ति एकही बार हो, स्वर मिलें वा न मिलें ।	दास दुखी मिसरी मुरी
वृत्त्यनुप्रास	एक वा अनेक व्यंजनों की प्रावृत्ति कई बार हो, स्वर मिलें वा न मिलें ।	धर्म धुरीण धीर नय- नागर ।
ध्रुत्यनुप्रास	तालु कडादि व्यंजनों की समता हो, स्वर मिलें वा न मिलें ।	जयति द्वारिका धीश, जय सतन सतापहर ।
जाटानुप्रास	प्रावृत्ति में केवल तात्पर्य का भेद ।	पीय निकट जाके नहीं, घाम चांदनी ताहि । पीय निकट जाके नहीं, घाम चांदनी ताहि ॥
अत्यानुप्रास	तुफात ।	हरि भजहु, सब तजहु ।
यमक	वही शब्द फिर हो परन्तु अर्थ दूसरा हो ।	भये विदेह विदेह विसेखी ।
भाषा समक	मिथित भाषा ।	यदा मुश्तरी कर्कटे जा कमाने ।

अर्धालंकार वर्णन के पूर्व उपमाओं के कुछ भेद नीचे लिखते हैं —

मुख जैसा मुखही है

अनन्वय (२)

मुखसा चन्द्र, चन्द्रसा मुख

उपमानोपमेय (उपमेयोपमा) (३)

मुखसा चन्द्रमा है

प्रतीप (४)

मुखही चन्द्रमा है

रूपक (५)

क्या यह मुख है वा चन्द्रमा ?

संदेह (१०)

मुख नहीं चन्द्रमा है

अपह्नुति (११)

मुख मानो चन्द्रमा है

उत्प्रेक्षा (१२)

मुख शोभायमान है चन्द्रभी तो प्रकाशमान है

प्रतिवस्तूपमा (१६)

अलङ्कार दर्पण (अर्थालङ्कार)

क्र.सं.	नाम	अक्षरार्थ	उदाहरण
१	पुणोपमा	उपमान, उपमेय, वाचक, धर्म	रागि ने उन्मत्त दिग्गज
	कुमोपमा	उपरोक्त में एक को या तीन कम	विजुग्मी पञ्चगुणी (धर्म लोपमा)
	मात्रोपमा	उपमेय की उपमा का प्रकार	शलि में मातल में मे, बरुन से या
	रजनापमा	उपमेय उपमान होता जाय	दुलरी, गी गमिने सुभा, मनरी से गुग्गुलु
२	अनन्वय	विपरीत उपमा उन्मी से ही जाय	मुद्र न म्मि में मुद्र, न किन्ने
३	उपमाभाषमेय	पक्षपर उपमा	उपमान तुम नानाभाष
४	प्रतीप	उपमेय की समान उपमा काही जाय	तु न भा पक्ष
५	रूपक	उपमेय की उपमा ही	मुद्र पक्ष
६	परिग्राम	उपमान ही उपमेय की दिया करे	भा पक्ष ही
७	उद्देश्य	(१) एक को दो, प्रकाश में शक्ति (२) एक को गुण प्रकाश प्रकाश में शक्ति	मुद्र पक्ष ही
८	व्यङ्ग्य	विपरीत, का पक्ष मुद्र पक्ष	मुद्र पक्ष ही
९	प्रति	कम से गुण को गुण प्रकाश प्रकाश में	मुद्र पक्ष ही
१०	प्रति	प्रति ही विपरीत प्रकाश प्रकाश में	मुद्र पक्ष ही

अङ्का संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
११	शुद्धापह्नुति कैवलापह्नुति हेत्वपह्नुति पर्यस्ता- पह्नुति भ्रंतापह्नुति वैकापह्नुति	सखी बात छिपाई जाय किसी मिस से बात छिपावै किसी हेतु से बात छिपावै एक का धर्म दूसरे में आरोपण करे सत्य कहने में पृच्छनेवाले का भ्रम दूर हो युक्ति कर दूसरे से बात छिपावै	यह मुख नहीं कमल है आप के मेजने के मिस से गम ने मुझे बड़ाई दी है यह तीव्र है अतएव चंद्र नहीं, रात्रि है अतएव रवि नहीं यह चंद्र का प्रकाश नहीं मुख चंद्र का प्रकाश है हे सखी क्या कप ज्वर का ताप है? नहीं सखी मदन सनाता है अर्द्ध निशा वह आयो भौन, मुदग्ता बरखै कवि कौन, निखत ही मन भयो अनंद, क्यों सखि मज्जन? नासखि चंद्र
१२	उत्प्रेक्षा	जो नहीं है उसे मान लेना	श्रवण समीप भये सित केला, मनहु जगठ पन अस उपदेसा कनकलता पर चंद्रमा, धौ धनुष द्वै धान
१३	अतिशयोक्ति वा रूपकाश- योक्ति सापह्नवाति- शयोक्ति भेदधाति- शयोक्ति सबन्धाति- शयोक्ति असबन्धाति- शयोक्ति व्यपजानि- शयोक्ति	केवल उपमान ही का कथन हो रूपकातिशयोक्ति छिपी हो इसकी कुछ बात ही और है अयोग्य को योग्य ठह- राना योग्य को अयोग्य ठहराना हेतु सुनते ही कार्य्य हो	अहि शशि मडल पै लसे, जिय पमाल जिन जान झौरे हँसिबो बोतिबो, झौरे याकी वान वा पुर के मन्दिर कहै, शशि लौ ऊचे लोग सो न सकहि कहि कल्प शत, सहस शारदा सेम पिमल कथा कर कीन अगमा, सुनत नसाय मोह मड दमा

अलङ्कार दर्पण ।		[११७]
नाम	माधुर्य लभन	व्याख्यान
अत्यंतानि- शयोचि तुल्ययागिता	हेतु के पूर्व ही कार्य हो (१) वर्ग्य उच्यते का वा अवर्ग्य अवर्ग्य का एक धर्म (२) शत्रु मित्र पर एक सम व्यवहार (३) अनेकों के गुण का तुल्य कर एक ही कार्य करना	प्रथम उपायों काय रि, पुनः टैन्को गजान कान फोक मरुत ना नाना, हथे मरुत निना भाराना यदी ना मान रि, रि अनति नरि केय प्रो भाव नरि शिव गजान फना मुखधा
दीपक	वर्ग्य अवर्ग्य का धर्म एक मात्र	गुण का रि, पर मुद्रित को रि उदात्त ना मेरा गजान निरुत ना
कारक दीपक	एक में प्रथम में अनेक भावा	हे रि रि काल रि काल
जागृति दीपक	प्रथम की जागृति एक और कार्य की जागृति	रि रि रि रि रि रि रि रि मा ना रि रि रि रि रि रि रि रि
पक्षान्ति	रि रि रि रि रि रि रि रि जाना	रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि
प्रतिबन्धना	उदात्त और उदात्त एक में एक ही धर्म	रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि
उदात्त	उदात्त और उदात्त एक में एक ही धर्म	रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि रि

संख्या	नाम	माक्षत रक्षण	उदाहरण
२१	निदर्शना	(१) दोनों वाक्यों में एक अर्थ की-आरोपणा (२) ओर ठौर के धर्म को ओर ठौर आरोप (३) अपनी अवस्था से दूसरों का उपदेश	मीठी वचन उदार के सोने माहि सुगंध मिय मुख शशि मे नयन चकोर धन्यो ताहि नहिं छाड़िये, कहत धरणिधर जेप मुख हे अम्बुज सो सखी, मीठी बात विशेष नाक पिनाकहि सग सिधायै
२२	व्यतिरेक	उपमा से उपमेय में कोई बात विशेष	वदन सून कविता बिना, सदन मुवनिता हीन
२३	सहोक्ति	सह शब्दार्थ युक्त मनो-हर युक्ति	मूर समा कर्ना कहि, कहि न जनावहिं आप
२४	विनोक्ति	विन शब्द युक्त मनोहर युक्ति	हिम कर वदनी नायिका, ताप हरति है जोय
२५	समासोक्ति	प्रस्तुत वर्णन से अप्र-स्तुत फुर हो	वदन मयक ताप नय मोचन होय न पूरन नह बिन, ऐसो प्रगट उदोत
२६	परिकर	विशेषण आशय सहित हो	गज हम बिन को कौ, छाँ नीर को दोय
२७	परिकराकुर	विशेष्य आशय सहित हो	कहा गया अलि कनका, छाड़ि सुकोमल जाय
२८	श्लेष	एक वाक्य में अनेक अर्थ	चतुर वहे जो तुव गरे, बिन गुन टारी माल
२९	अप्रस्तुत प्रशंसा	अप्रस्तुत के वर्णन से प्रस्तुत का गुण प्रगट हो	लखन हृदय लालसा विमेली जाय जनकपुर आइय देखी
३०	प्रस्तुताकुर	प्रस्तुत में उपालम्भ	स्वर्ग चटाय पतित लौ, गग कहा कहु तोय
३१	पर्यायोक्ति	(१) व्यंग से रसाल उक्ति (२) मिस करि कार्य्य माधन	
३२	व्याजस्तुति	किसी बहाने किसी की स्तुति निंदा	

अ.सं.	नाम	अर्थ	उदाहरण
३३	आक्षेप	प्रतिषेध-निषेध	अपि कतिपय एक नाम गम प्राप्त प्रगल्भता माता
३४	प्रतिषेधनाम	प्रतिषेध का आभास हो	वा सुग चद्र प्रकाश, मुक्ति माय सुनि मन है
३५	विभावना	(१) हेतु विना कार्य हो (२) अपूर्ण हेतु से कार्य पूर्ण हो (३) प्रतिषेध के तात्पर्य भी कार्य पूर्ण हो (४) अकारण वस्तु से कार्य प्रगट हो (५) कारण से कार्य रिक्त हो (६) कार्य से कारण प्रगट हो	विन जायन रीति चारा अग्न मति है आता काम कुमुद धनु माय मति मन्त्र मुन आने का दर्शन गतां रनि विधिन उदय, देगा मोहि सद्य पुनि मा नय वा भिन्न कु भूषण उम मय म मति मति मा विन मैं हुन जो मा
३६	विशेषाति	हेतु रहने का अभाव हो	मैं मों पत्नी है, वि विन चलो नै
३७	असंगत	असंगतता का अभाव	वा मा म मति मति है मति
३८	असंगति	(१) हेतु और कारण में असंगतता हो (२) कारण और कार्य में असंगतता हो (३) कारण और कार्य में असंगतता हो (४) कारण और कार्य में असंगतता हो	मति मति मति मति मति मति मति मति मति मति मति मति मति मति मति मति
३९	विशेष		

नम्या	नाम	संक्षिप्त रक्षण	उदाहरण
४०	सम	(२) कारण का और रग कार्य का और रग (३) भला उद्यम करते बुरा फल हों (४) बुरा उद्यम करते भला फल हों (१) यथायोग्य का सग (२) कारण के अग कार्य में दिख पड़ें (३) उद्यम करते ही बिना विघ्न कार्य हों	ज्यों र दृढ़े श्याम रग, त्यों र उज्ज्वल होय भले कहत दुख गोरु लागा कालकूट फल दीन अमी के जस दूलह तम बनी बगना नीच सग अचज कहा, लछमी जलजा आहि छुवतहि दूट पिनाक पुगना
४१	विचित्र	इच्छा फलार्थ उलटा प्रयत्न	नमत उच्चता लहन को, जेहि पुरष सचेत
४२	अधिक	आधार वा आधेय की कमी बरी	अधिक सनेह नमांत न गाता
४३	अल्प	प्रल्पता रमणीय हो	रोम रोम प्रति राजही, कोटि र ब्रह्मन्ड
४४	अन्यान्वय	एक से दूसरे का उपकार	निशिहीं सों ससि सार, नसि सों निसि नीकी लगै
४५	विशेष	(१) आधेय अनागर (२) थोड़े आरम्भ से विशेष फल, थोड़े का बहुत मानना (३) एक वस्तु का वर्णन अनेक ठौर करना (४) और से और ही कार्य हो	नभ ऊपर कचन लता, कुसुम महा छवि देय कपित्थ दरस सकल दुख बीते निज प्रभु मय देखहि जगत कामन कहि विशेष बिछुगन एक प्राण हसि लेहीं
४६	व्याघात		

संख्या	नाम	मात्रा लक्षण	उदाहरण
		(२) विरोधी से अपना कार्य नाशना	गतिप अथवा अनुप्रास लग
४७	कारणमात्रा	कारण का प्रत्यय	रहने जानेसे प्रान
४८	मालादीप	दीपक+धकावलि, उत्तर प्रति उपकार	धर्मन गिति, गिति से ज्ञान
४९	नार	एक से एक बहकर	मम सौ काय अ काय नो
५०	यथावत्	यथान में यस्तु अनुक्रम	सोभा यान अया
५१	पर्याय	अनेक एक स्थल पर या एक अनेक स्थल पर आचार्य	मनु नो मनुं है मनु, ताह
५२	परिगुति	लेना देना समकारी हो	मो शुभ काय
५३	परिमाण	एक स्थान में बरान कर दूसरे स्थान में टटाना	क अति मित गिति का
५४	धिवन्	या मो यह या यह	गनन गनन भा
५५	मातृका	(१) एक मता यह मता	दूरी चरनता चरन मे
		(२) अनेक मता यह मता	भई मता अय
५६	मता	एक मता यह मता	मता मता मो की, मेन
५७	मता	एक मता यह मता	पर एक मता
५८	मता	एक मता यह मता	मता मता मता मे मता, मता
५९	मता	एक मता यह मता	मता मता मता
६०	मता	एक मता यह मता	मता मता मता
६१	मता	एक मता यह मता	मता मता मता
६२	मता	एक मता यह मता	मता मता मता
६३	मता	एक मता यह मता	मता मता मता
६४	मता	एक मता यह मता	मता मता मता
६५	मता	एक मता यह मता	मता मता मता
६६	मता	एक मता यह मता	मता मता मता
६७	मता	एक मता यह मता	मता मता मता
६८	मता	एक मता यह मता	मता मता मता
६९	मता	एक मता यह मता	मता मता मता
७०	मता	एक मता यह मता	मता मता मता

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
४०	सम	<p>(२) कारण का ओर रग कार्य का ओर रग</p> <p>(३) भला उद्यम करते बुरा फल हो</p> <p>(४) बुरा उद्यम करते भला फल हो</p> <p>(१) यथायोग्य का संग</p> <p>(२) कारण के अग कार्य में दिख पड़े</p> <p>(३) उद्यम करते ही विना विघ्न कार्य हो</p>	<p>ज्यों२ वृद्धे श्याम रग, त्यों उज्ज्वल होय</p> <p>भले कहत दुख रोगहु लागा</p> <p>कालकूट फल दीन अमी के</p> <p>जस दूलह तम बनी बराता</p> <p>नीच संग अचरज कहा, लछमी जलजा आहि</p> <p>हुवतहि दूट पिनाक पुर्गना</p>
४१	विचित्र	इच्छा फलार्थ उलटा प्रयत्न	नमत उच्चता लहन को, जेहें पुरुष सचेत
४२	अधिक	आधार वा आधेय की कमी बरी	अधिक सनेह समात न भाता
४३	अल्प	अल्पता स्मरणीय हो	रोम रोम प्रति राजही, कोटि२ ब्रह्मन्ड
४४	अन्योन्य	एक से दूसरे का उपकार	निशिहीं सों ससि साग, ससि सों निसि नीकी लगै
४५	विशेष	<p>(१) आधेय अनाचार</p> <p>(२) थोड़े आरम्भ से विशेष फल, थोड़े का बहुत मानना</p> <p>(३) एक वस्तु का वर्णन अनेक ठौर करना</p>	<p>नभ ऊपर कचन लता, कुसुम महा छवि देय</p> <p>कपि-तय दस सकल दूख बीते</p> <p>निज प्रभु मय देखहि जगत कामन कहि विरोध</p>
४६	व्याघात	(४) आर से और ही कार्य हो	विद्युत्त एक प्राण हरि लेहीं

अलङ्कार	नाम	भक्षित लक्षणा	उदाहरण
७०	अवज्ञा	(१) एक के गुणदोष को दूसरा न गढ़े (२) तिरस्कार	ऊपर वरसे तम नहि जाना नो गुण धमका जहि जाऊ, जो न राम जे पतन भाऊ
७१	तेज	दोष में गुण और गुण में दोष लखे	काक कटुक तिधका सिंग पतन पीये की
७२	मुद्रा	छाप या मोहर के समान दूसरा ओ अर्थ हो	भानि न गता जो अनुगता
७३	रक्षापति	प्रस्तुत अर्थ में काम से और भी नाम	गमिरा चतुर्मुख नांछद्रपति, सरन राग के धाम
७४	सहस्र	अपना गुण नक्षिस्वंगति का गुण लेय	बेमत मोरी छार मिलि, पद्म गा छरि प
७५	पूर्यस्व	(१) स्वयंका गुण लेय दोष छार अपना कि प्रदत्त करे	१ ओर स्वयं ओ शिर गे, गे मुन्म में से
			- गवद परम का पद मुग्ध, मिलि - मिलि मुत्तम अंग
		(२) यल कहते पर भी गुण न मिले	राम भा
७६	समस्त	सोचि के गुण न लेय	...

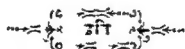
श्रुति	नाम	माक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
६९	काव्यलिङ्ग	युक्ति से अर्थ समर्थन	सो नर क्यों दशकध, बालि बन्धो जिहि एक शर
६०	अर्थांतरन्यास	सामान्य विशेष से वा विशेष सामान्य से दृढता	नृप का पात पलान, पहुँ- चत है सँग पान के
६१	विकस्वर	विशेष फिर सामान्य फिर विशेष कथन से दृढता	हरि गिरि धान्यो सन पुरप, भाग सँई ज्यों शेष
६२	प्रौढोक्ति	अहेतु को हेतु मानकर उत्कर्ष कथन	जमुना तीर तमाल मे, तैर बाल मसेन
६३	संभावना	यों होवे ता यो होय	नहतो गुणनि अपाग, बत्ता हो तो शेष जो
६४	मिव्याध्य- वसिति	अस्त्य कथन अस्त्य रीति से	वारि मये घृत होय बर, सिकताते बर तेल
६५	ललित	प्रस्तुत का प्रतिर्विच भाय मे कथन	सेतु-बाधि करिहो कहा, उतारि गयो प्रव अरु
६६	प्रदर्शण	(१) यत्न रिना वाञ्छित फल मिलै (२) बिना भ्रम वाञ्छित मे भी अधिक फल प्राप्ति (३) वस्तु के यत्न को प्राप्ततेही वस्तु प्राप्ति	नाथ सरल साधन मे हीना कीनी कृपा जानि जन दीना बहु धीर हयैह सुत चारी
६७	विषाद	चित चाह से उलट होना	यह विधि मन विचार करि राजा, आय गये कपि सहित ममाजा
६८	उल्लास	एक का गुण ध्वन्युण दूसरा धरे	राज्य देन कहि दीन जन
६९	अनुशा	चाह से दोष को गुण ठहराना	न्याय मत पावन कर, गा धौ यह मान गौतम जाय परम हित माना

पद्य	नाम	भोक्षित उदाहरण	उदाहरण
७०	प्रयोजना	(१) एक के गुणद्वारा को दूसरा न गह (२) तिष्ठकार	ऊपर वामें तुरा नहि जामा मो मुग धर्मधर्म नहि नाड नो न तम पद पका नाड
७१	तेज	तेज में गुण और गुण में दोष लखे	काय कलक विधाय रिता पान पीजरे की
७२	मुद्रा	द्वाप या मोहर के समान दूसरा भी अध हो	भाति न गता जो अमृता
७३	रत्नावलि	प्रस्तुत अर्थ में प्रथम में और भी नाम	मनिर चतुर्भुज तात्पर्यपरि, मदन शाव क धाम
७४	तद्वत्	अपना गुण तद्विभगति रा गुण लेख	बन मोता पार निनि, पत्र गा रवि रेख
७५	प्रत्यक्ष	(१) स्वयं का गुण लेकर गुण और अपना कि प्रत्यक्ष करे	१ जो ज्ञान मो मित्र गौर, २ गुण न हो
			३ गुण नहि जो पार गुण नहि नहि नहि गुण नहि
		(२) गुण करने पर भी गुण नहि	गुण नहि नहि नहि नहि गुण नहि नहि नहि नहि गुण नहि
७६	स्वयंप्रकाश	स्वयं में गुण नहि	गुण नहि नहि नहि नहि गुण नहि नहि नहि नहि गुण नहि
७७	स्वयंप्रकाश	स्वयं में गुण नहि	गुण नहि नहि नहि नहि गुण नहि नहि नहि नहि गुण नहि
७८	स्वयंप्रकाश	स्वयं में गुण नहि	गुण नहि नहि नहि नहि गुण नहि नहि नहि नहि गुण नहि

संख्या	नाम	माक्षिप्त नक्षप	उदाहरण
७६	सामान्य	भेद रहने हुए भी सादृश्य में विशेषता न जान पड़े	एक रूप तुम वाता ढोंक
८०	उन्मीलित	सादृश्य से हेतु भेद	कीरति आगे तुहिन गिरि हुए परत है जान
८१	विशेषक	जो परीक्षा द्वारा मिद्ध हो	जाने तिय मुख अरु कमल शशि दर्शन ते माम्
८२	गूँतोत्तर	(१) कुछ भाव सहित उत्तर देना (२) चित्रोत्तर-प्रश्नोत्तर एकही पद में (३) अनेक प्रश्न का एक ही उत्तर अर्थ प्रहेलिका	कह दशकूट कनन तैं बंदर, में ग्युवीर दूत दशकवर का वर्षा जब कृपी मुखाने वारि वताय विहारि मृदा, सरन नवेली नाग बावी बाकी जल भरी, ऊपर बारी आग । जबै बजाई बामुरी, निकल्यो कारो नाग सीतहि सभय देखि ग्युगई, कहा अनुज सन सैन बुझाई जोरि पाणि प्रभु कीन प्रणाम पिता समेत लीन निज नाम नखि शुक काटे अश्र ये, दतनि जानि अनार पुनि आउव यहि विगिया भाली, अम कहि मन विहँसी डरु प्रात्वी कहत जताये सै, वृष भागा फ सेत ते
८३	सूक्ष्म	पर आशय देख किया से भाव जतावे	
८४	पिहित	छिपी बात को भाव से जताना	
८५	व्याजोक्ति	प्रगट वस्तु का रूपट से गोपन करना	
८६	गूँतोक्ति	और के मिलन में और से बात करना	
८७	विचृतोक्ति	द्विषा श्लेष प्रगट करना	
८८	युक्ति	किया द्वारा मर्म द्विषाना	पाँव चलत आत् चने, पाँछा नैन जेभा

अलङ्कार	नाम	आप्ता अर्थ	उदाहरण
८८	लाकाङ्कि	कहावत का प्रसंग के साथ कहना	कम प्रशान रिग करि रागा नो उन के ना नाम का रगता
८९	द्वैकाङ्कि	नोकाङ्कि आभिप्राय हा	नम नान नम हा का भाषा ता। उमा गुप रिग रागा
९०	यत्राङ्कि	स्वयं श्रेष्ठ में दृष्ट अर्थ निकले	भन कि नरु दू न हागे
९१	स्वभावाङ्कि	(१) स्वभाव कथा (२) प्रतिपादक कथा	रुतुल गा। मग नरि माई, प्राप्ता गा। न नरु न नरु रिग नरु नरु नरु
९२	भाषिका	मूल भाषिक का प्रसंग- तक कहना	जो नम न हागा। गा। नरु नरु
९३	उदात्त	अतिशय समुच्चि का वर्णन	गा। नरु रिग नरु नरु नरु
९४	प्रशङ्गुनि	ज्ञान सुगम बात का का प्रतिपादक वर्णन	म न नरु न, नरु नरु रिग नरु नरु
९५	निगदि	नाम में दृष्ट कथा की वर्णना	नरु नरु नरु रिग नरु
९६	प्रतिनिध	प्रतिनिध कथा का वर्णन	नरु नरु नरु रिग नरु नरु नरु

सं-या-म	नाम	संक्षिप्त रक्षण	उदाहरण
६८	विधि	भिन्न वस्तु का विधि पूर्वक विधान	काकिल है कोकिल जैसे, मृत्यु में कागिंह टै
६९	हेतु	(१) कारण कार्य सग ही कथन हो (२) कारण कार्य की एकता	अमृग उदय अवलोकित ताना, परुज कोक 'लोक मुग्धाता कोऊ कोटिक सप्रहो, कोऊ लाय हजा, मो सम्पति यदुपति सदा, त्रिपति विरा- ग्य हा ॥
७०	प्रमाण	वेद शास्त्र युक्त कथन	मन्य बचन मत्र 'न. भलो, बुगे कहन नहि कोय



शुभम्भूयात्



विज्ञापन ।

भानु-कवि विरचित निम्न लिखित ग्रंथ और पुस्तकें इस यंत्रालय में मिलती हैं :—

(साहित्य परीक्षार्थियों के लिये पर्याप्तयोगी)

काव्य प्रभाकर " भाषा साहित्य का अनुदा ग्रंथ " } १)

लक्ष्मी वैकुण्ठन प्रेम कथाया में भी प्राप्य

द्वय प्रभाकर " भाषा विंगत मटीक " २)

द्वय भागवती मृदुरूप सरल भाषा विंगत ॥३॥

हिंदी काव्यालंकार ॥४॥

अलंकार प्रश्नोत्तरी ॥५॥

नवप्रचामृत रामायण ' तनु विंगत मटीक ' ॥६॥

(अन्य ग्रंथ)

जोतलामाला भक्तगाथा (पन्तोगमरी भाषा) ॥७॥

चतुरस्रिमान (लेखक रामायण) ॥८॥

तुर्गाँ ता हो (पृथगाष्टक आ रामायण) ॥९॥

जयानि गालीमी ॥१०॥

गुणकार केज (३४) ॥११॥

नोट :—पुस्तक विमोचनों को दे कर मर्यादित म दिव्य भाषा है । पर
अवधार म कर्मोमने मर्याद नई ।

पता—

जगन्नाथ प्रसाद,

भानु कवि

प्रकाशक म विज्ञापक, लो. म

